दादावाणी

चंदूभाई खा रहे हों, पी रहे हों, किच-किच कर रहे हों तो वह सारा मोह है, उसे देखते रहना है आपको। तो वह मोह चला जाएगा। दखल करते हो कि 'ऐसा खारा क्यों बनाया है' तो वापस मोह को उरा गाढ़ किया। दखल नहीं करना है, 'देखते' ही रहना है।

राजस्थान यात्रा : ता. 27 फरवरी से 8 मार्च 2025

केसरीयाजी

नाथद्वारा

उदयपुर

राणकपुर

नाकोड़ाजी

वर्ष : 20 अंक : 6
अखंड क्रमांक : 234
अप्रैल 2025
पृष्ठ - 32

Editor : Dimple Mehta
© 2025
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Multiprint
Opp. H B Kapadiya New High School, At-Chhatral, Tal: Kalol, Dist. Gandhinagar - 382729

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज**,
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : 9328661166-77
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
+91 8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
5 साल
भारत : 1000 रुपये
वार्षिक
भारत : 200 रुपये
भारत में D.D./M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

'ज्ञाता-द्रष्टा' पद में दखलंदाज़ी बंद

संपादकीय

अक्रम विज्ञान का सार संक्षेप में क्या है? 'मैं शुद्धात्मा ही हूँ, केवल ज्ञाता-द्रष्टा ही हूँ' और जो अपने जीवन में हो रहा है, वह पूर्वजन्म का भरा हुआ माल निकल रहा है, उसे 'देखते' रहना है। 'मैं शुद्धात्मा हूँ' इस जागृति के अलावा जो कुछ भी निकलता है, वह भरा हुआ डिस्चार्ज माल है, वही चारित्रमोह है। उसे देखना-जानना वही है ज्ञान और भरे हुए माल में तन्मयाकार होना, वह दखलंदाज़ी है। देखना-जानना चूक गए, वही दखलंदाज़ी का एक्ज़ेक्ट थर्मामीटर (मापदंड) है।

महात्माओं को प्रश्न होता है कि हम ज्ञाता-द्रष्टा होकर देखने का प्रयत्न करते हैं लेकिन उस समय बुद्धि से देखते हैं ऐसा लगता है। वहाँ परम पूज्य दादाश्री कहते हैं कि बुद्धि जो देखती है, उसे देखने वाले 'आप' हैं। यों इन्द्रियों से जो दिखाई देता है, उसे बुद्धि जानती है और आत्मा, अंत:करण को देखता-जानता है। बुद्धि और ज्ञान का क्रियापन कैसे पकड़ेंगे? उदयकर्म में दखल करें, उस समय बुद्धिज्ञान होता है और उदयकर्म में दखल न करें, उस समय आत्मज्ञान होता है।

चंदूभाई किसी के साथ सही-गलत करते हों, गुस्सा करते हों तो आप चंदूभाई के ज्ञाता-द्रष्टा हैं! चंदूभाई खाते-पीते हों, किच-किच करते हों, तो वह सब चारित्रमोह है, उसे देखते रहोगे तो वह मोह खाली होता जाएगा। कुछ भी भोगवटा आए तो समझ जाना कि मैं दूसरी सीट पर बैठा हूँ, यह सीट मेरी नहीं है। फिर वहाँ से उठकर वापस शुद्धात्मा की सीट पर बैठ जाना। यह विज्ञान सब काम कर रहा है, इसलिए उलझते रहने जैसा यह जगत् नहीं है। अब अंत:करण में जो भी उलझने उत्पन्न हों, उनमें तन्मयाकार नहीं होना है। अपनी मज़बूती ऐसी कर लेनी है कि कैसे भी कर्म के उदय आएँ तब स्वक्षेत्र में रहकर आपको अपनी शुद्धात्मा की गुफा में बैठे-बैठे देखते रहना है, बाहर निकलना ही नहीं है न!

इस पूरे ज्ञान का सार क्या है? यदि तुम 'रियल' को जानकर बैठे हो तो 'रिलेटिव', वह तो 'साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स' है। इसलिए जो हो रहा है उसे मात्र देखते रहो। कोई दखल मत करना। ज्ञान मिलने के बाद ज्ञाता-द्रष्टापन न चूके, उसे 'फॉरेन' (रिलेटिव) की कोई ज़ोखिमदारी नहीं रहती। फिर भी महात्माओं को गहरा अफ़सोस रहता है कि ज्ञाता-द्रष्टापद अविरत नहीं रह पाता। आता है और जाता है, आता है और जाता है, ऐसा होता रहता है। उसका खुलासा करते हुए परम पूज्य दादाश्री कहते हैं, अभी संसार के कर्म बाकी हैं, उन्हें पूर्ण करने हैं न! जैसे-जैसे ये फाइलें कम होती जाएँगी, वैसे-वैसे *लक्ष* ज़्यादा रहता जाएगा! हम सभी महात्मा अब भरे हुए माल के सामने बुद्धि के दखल को जानकर, ज्ञाता-द्रष्टा पद में रहने का पुरुषार्थ करके, निरंतर परमानंद में रह सकें, यही हृदयपूर्वक अभ्यर्थना।

जय सच्चिदानंद

'ज्ञाता-द्रष्टा' पद में दखलंदाज़ी बंद

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलतः गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

'आप' चंदू हो गए, वहाँ गाफ़िल

प्रश्नकर्ता : दादा ने भेद ज्ञान दिया, भिन्न बनाया। 'मैं' अलग, दरअसल अलग हूँ, लेकिन वह चंदूभाई तो रहेगा न? वह तो रहेगा न, जितने साल बाकी रहे होंगे उतने साल तक रहेगा न? चंदूभाई *पुद्गल* तो रहेगा ही न?

दादाश्री : रहेगा न! वह *पुद्गल* तो रहेगा। *पुद्गल* आपने अर्पण कर दिया है। अब यह जो *पुद्गल* है, वह व्यवस्थित के अधीन है। वह अपने व्यवस्थित के अधीन चलता रहेगा। 'आपको' देखते रहना है। 'वह *पुद्गल* क्या कर रहा है', उसे देखते रहना है, इतना आपका पुरुषार्थ है।

प्रश्नकर्ता : देखते रहना है और कभी *पुद्गल* को सावधान भी करना चाहिए या नहीं?

दादाश्री : हाँ, सावधान करना चाहिए! लेकिन ग़फ़लत में पड़ जाए तो सावधान करना।

प्रश्नकर्ता : अरे, चलते-फिरते ग़फ़लत तो करता ही रहता है।

दादाश्री : नहीं, यह सब तो उदयकर्म करवाते हैं। लेकिन आप खुली आँखों से चलो और सावधानीपूर्वक चलो, बस इतना ही। उसका दुरुपयोग नहीं होना चाहिए। वर्ना देखने की जागृति मंद हो जाएगी। 'देखे', तब तो उसे कुछ भी नहीं करना है। जो आज्ञा में रहता है, वह 'देखता' ही है चंदूभाई को, तो उसे कोई बात करने की ज़रूरत ही नहीं है। लेकिन जब वह नहीं देखता है, तब सावधान करना पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : जागृति की जो बात की न, जागृति में रहने की और सावधान रहने की, उसका हम यह विवरण कर रहे हैं।

दादाश्री : हाँ, ठीक है। जिससे ज्ञाता-द्रष्टा रहा जा सके, उसे इस बात की ज़रूरत नहीं है। और जिसे जागृति नहीं रहती हो, उसे आप कहना कि 'अब खुली आँखों से चलना, ग़ाफ़िल मत हो जाना', वर्ना व्यवस्थित तो आपको चलाएगा ही, लेकिन वह ग़फ़लत वाला नहीं होना चाहिए और जो ज्ञाता-द्रष्टा रहता है उसके लिए तो ग़ाफ़िल भी नहीं, कुछ भी नहीं रहा। वह आपके हिसाब में आता है। चंदूभाई क्या कर रहे हैं, उसके ज्ञाता-द्रष्टा हो आप।

प्रश्नकर्ता : यानी दादा, किसी भी प्रसंग में चंदूभाई को देखने के बजाय अगर 'मैं ही चंदूभाई' बन जाऊँ तो क्या ग़ाफ़िल होना कहा जाएगा?

दादाश्री : हाँ, उसे ग़ाफ़िल होना कहा जाएगा। किसी भी बात में यों चंदूभाई को देखने के बजाय आप चंदूभाई बन जाओ तो, वह है ग़ाफ़िल। तब हम क्या कहते हैं कि वहाँ पर आँखें खोलकर चलो।

प्रश्नकर्ता : हाँ, लेकिन कभी ऐसा होने के बाद फिर आँखें खुल जाती हैं। दादा सावधान कर देते हैं कि यह हो गया, अब इसे देखो।

दादाश्री : हाँ। इसलिए वहाँ पर हमने कहा है कि, 'आँखें खोलकर खड़े रहो।' आपको वह जागृति रखनी है। ऐसा हो जाता है न? दादा को कहने नहीं आना पड़ता न? विज्ञान सारा काम कर रहा है। आपको किसी तरह की परेशानी नहीं है। सहज रूप से काम हो रहा है। सावधान भी करता है। लोग कहते हैं कि आत्मा का अनुभव नहीं हो रहा। अरे भाई, क्या अंदर सावधान नहीं करता पूरे दिन? हाँ। तो भाई, वही आत्मा है और कौन आएगा? कोई परदेशी है, जो अंदर घुस गया है?

सिर्फ देखना ही है, 'ज्ञाता-द्रष्टा' पद में

तो पहले किसका ज्ञाता-द्रष्टा? 'इस जगत् में क्या चल रहा है!' इसे देखना ही है और कुछ नहीं करना है। सिर्फ देखना ही है।

'क्या हो रहा है', उसे देखते रहो, तो आत्मा अलग हो गया कहा जाएगा।

प्रश्नकर्ता : ज्ञाता-द्रष्टा की बात में ज़रा पूछना था। घर में या बाहर की कोई (कर्म की) व्यस्तता हो, उसके बजाय एकांत में जाकर ज्ञाता-द्रष्टा रहे-करें, ऐसा ज़रूरी है क्या? उससे फायदा होगा?

दादाश्री : ऐसा है न, उसे उलझन कहते हैं। 'क्या होता है', वह देखना, उसे ज्ञान कहते हैं। अपने हाथ में सत्ता नहीं है न! इच्छा तो है कि 'भाई, ऐसा हो तो अच्छा'। लेकिन ऐसा होना चाहिए न?

आपने जो माल भरा है, उस माल की वजह से ये दखलंदाज़ी करते हो न! और ऐसा माल दूसरे में नहीं भरा हो, तो उसकी दखलंदाज़ी नहीं होती। हमारी तो दखल ही नहीं है, किसी भी प्रकार की। हम तो ज्ञाता-द्रष्टा में ही रहते हैं।

प्रश्नकर्ता : तो दखलंदाजी की डेफिनेशन (परिभाषा) बताइए। दखलंदाजी का एक्ज़ेक्ट थर्मामीटर क्या है?

दादाश्री : देखते रहना, वह दखलंदाजी नहीं है। देखना और जानना, उसे दखलंदाजी नहीं कहते।

ज्ञाता-द्रष्टा, बुद्धि से या प्रज्ञा से?

प्रश्नकर्ता : मैं ज्ञाता-द्रष्टा होकर देखने का प्रयत्न करता हूँ, उस समय भी बुद्धि ही देख रही होती है, ऐसा लगता है।

दादाश्री : यह सही कह रहे हो, बुद्धि ही देखती है। ज्ञाता-द्रष्टा तो, जहाँ बुद्धि भी नहीं पहुँच सकती, वहाँ ज्ञाता-द्रष्टा की शुरुआत होती है।

'उस ज्ञाता-द्रष्टा को देखने का प्रयत्न करता हूँ,' 'प्रयत्न करता हूँ' कहते हैं इसलिए वह बुद्धि ही है। अब जिस समय बुद्धि का *चलण* (वर्चस्व, सत्ता, खुद के अनुसार सब को चलाना) रहता है, उस समय बुद्धि देख रही होती है ऐसा लगता है लेकिन जो ऐसा कहता है, वह ज्ञान है। यानी 'आपने' यह 'देखा'। 'देखा' अर्थात् ज्ञाता की तरह से देखा ऐसा नहीं कहा जाएगा लेकिन द्रष्टा की तरह से 'देखा' क्योंकि ज्ञाता-द्रष्टा की तरह देखना कब कहा जाएगा? 'ऐसा लग रहा है' तब द्रष्टा की तरह से देखा और 'जानने में आता है' तब ज्ञाता की तरह जाना। देखने वाले तो 'आप' ही थे या और कोई साहब आए थे?

प्रश्नकर्ता : लेकिन जो कहता है कि 'ऐसा लग रहा है' वह बुद्धि ही है, ऐसा लगता है।

दादाश्री : वह बुद्धि नहीं है। बुद्धि देखने में पड़ी होती है, यानी कि बुद्धि उस तरफ से देखती है और वह जो देख रही है, उसे 'आप' जानते हैं कि 'यह बुद्धि ही देख रही है, मैं नहीं

देख रहा हूँ।' अत: जो बुद्धि को देखता है, वह 'आप' हैं। अत: वहाँ पर आप खुद द्रष्टा की तरह काम करते हैं। अत: देखने वाला कौन है, वह आपने ढूँढ निकाला। अर्थात् यह द्रष्टा काम तो कर रहा है!

प्रश्नकर्ता : लेकिन बुद्धि से परे नहीं जा पाते, तो यह बुद्धि में रहकर ही देखा जा रहा है?

दादाश्री : नहीं, बुद्धि से परे तो जा पाए ही हो लेकिन बुद्धि को अभी भी पोषण मिल रहा है। बुद्धि को कुछ कारणों की वजह से पोषण मिलता है, वे धीरे-धीरे कम हो जाते हैं। बाकी, बुद्धि से परे तो गए ही हैं, वर्ना बुद्धि इन्हें यहाँ पर रोज़ आने नहीं देती।

प्रश्नकर्ता : बुद्धि ज़रा दखल करती है, तब कहते हैं कि 'एक तरफ बैठ। मैं तो दादा के पास जाऊँगा।' चुप रह!

दादाश्री : हाँ, तो कहना चाहिए कि चुप रह!

प्रश्नकर्ता : दादा के पास आने में बुद्धि दखल नहीं करती, यह तो आता है, बिल्कुल प्रेम से।

दादाश्री : प्रेम से इसका का अर्थ ही यह है कि जो बुद्धि से आगे पहुँचा है, वह यह ज्ञान है। यह प्रज्ञा का काम है।

बुद्धि यह देखती है लेकिन आपको अगर मन में ऐसा लगता है कि 'मैं देख रहा हूँ,' वह भ्रांति है। इन सभी ज्ञेय चीज़ों का ज्ञाता-द्रष्टा 'मैं' नहीं लगता, लेकिन यह बुद्धि लगती है। लेकिन इस बुद्धि का ज्ञाता-द्रष्टा कौन है? आत्मा। लोग तो इसे क्या कहते हैं? 'मैं ही देखता हूँ, मैं ही देख रहा हूँ' ऐसा लगता है। लेकिन आप क्या कहते हो? 'यह बुद्धि देख रही है' ऐसा लगता है। नहीं तो लोग तो ऐसा ही कहते हैं कि 'मुझे यह दिख रहा है' और वह 'मैं देख रहा हूँ' वही भ्रांति है।

यदि 'जानने' में आ जाए तो रियल (यथार्थ) ज्ञाता कहलाएगा। वह यह ज्ञाता-द्रष्टा है! और आपको बार-बार अनुभव में आता ही है लेकिन ऐसा मेल बिठाना पड़ेगा।

प्रश्नकर्ता : उस डिमार्केशन का पता किस तरह से चलता है कि यह बुद्धि का देखना-जानना है और यह 'खुद का' देखना-जानना है?

दादाश्री : बुद्धि का तो, ये जो आँखों से दिखाई देता है वही देखना-जानना है और जो कान से सुनाई देता है वह, जीभ से चखते हैं वह, वह सारी बुद्धि है।

प्रश्नकर्ता : तो यह इन्द्रिय का हुआ, लेकिन बाकी सब अंदर जो चल रहा होता है और बुद्धि का देखना कि ये पक्षपाती हैं, ऐसे हैं, वैसे हैं, वह सब भी बुद्धि ही देखती है न?

दादाश्री : इन सब को देखना, वह बुद्धि का ही है। और आत्मा का ज्ञान-दर्शन तो देखना और जानना है, वह अलग चीज़ है। द्रव्यों को देखे-जाने, द्रव्यों के पर्याय को जाने, उनके गुणों को जाने तो वह सब देखना-जानना, उसे आत्मा कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : अत: ज्ञान लेने के बाद जिन महात्माओं को ऐसा रहा करता है कि वह खुद शरीर से अलग है, शुद्धात्मा का *लक्ष* बैठ गया है और फिर देखने की सभी क्रियाएँ चलती रहती हैं तो वे सभी प्रज्ञा से होती हैं न?

दादाश्री : सभी कुछ प्रज्ञाशक्ति से ही होता है। प्रज्ञा कुछ हद तक, जब तक फाइलों का

निकाल करता है, तब तक प्रज्ञा है। फाइल खत्म हो गई तो फिर खुद ही, आत्मा ही जानता है।

प्रज्ञा अर्थात् ऐसा कह सकते हैं कि आत्मा ही दिखाता है लेकिन अंत में फिर प्रज्ञा बंद हो जाती है। प्रज्ञा है तब तक शुद्धात्मा है, और आत्मा, वह तो परमात्मा है। हैं एक ही, लेकिन इसके (प्रज्ञा) आने के बाद 'वह' (आत्मा) हो जाता है!

सभी को जानने वाला ज्ञाता-द्रष्टा

प्रश्नकर्ता : कल वे रो रहे थे तो उन्हें दिख रहा था कि ये चंदूभाई रो रहे हैं लेकिन फिर अंदर से, 'दादा भगवान ना असीम जय-जयकार हो' चल रहा था तब चंदूभाई को जो देख रहा था, वह कौन है और जो 'असीम जय-जयकार' बोल रहा था, वह कौन है?

दादाश्री : वह तो अंदर रिकॉर्ड चलती ही रहती है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् अंदर वाली 'ओरिजिनल' टेप चलती ही रहती है?

दादाश्री : वह तो किसी-किसी टाइम पर चलती ही रहती है। अत: जो वह बोलता है, वह बोलने वाला अलग और इन चंदूभाई को देखने वाला अलग!

प्रश्नकर्ता : जो चंदूभाई को देखने वाला है, वह शुद्धात्मा है?

दादाश्री : चंदूभाई जो यह कर रहे हैं न, उन्हें देखने वाली बुद्धि है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर ज्ञाता-द्रष्टा कैसे हुए, यदि बुद्धि देख रही हो तो?

दादाश्री : ज्ञाता-द्रष्टा तो जो इन सभी को देखने वाले हैं वे, जो इन सभी को एट ए टाइम जाने, वही ज्ञाता-द्रष्टा है। अंदर ऐसा लग रहा है उसे, जो बोला जा रहा है उसे, इन सभी को एट ए टाइम जानते हैं।

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा यह देखता है कि बुद्धि क्या कर रही है?

दादाश्री : वह बुद्धि को देखता है, मन क्या कर रहा है उसे देखता है, वाणी कैसी बोली जा रही है उसे और फिर अंहकार क्या कर रहा है, इन सभी को देखता है।

प्रश्नकर्ता : उन्हें ज्ञाता-द्रष्टा देखता है न? वह जो देखता है, वह ज्ञाता-द्रष्टा है या कुछ और?

दादाश्री : हाँ, वही आत्मा है।

प्रश्नकर्ता : और जो चंदूभाई को देखती है, वह बुद्धि है?

दादाश्री : उसे बुद्धि देखती है और बुद्धि को जो देखता है वह आत्मा है। बुद्धि क्या कर रही है, मन क्या कर रहा है, अहंकार क्या कर रहा है, इन सभी को जो जानता है, वह आत्मा है। आत्मा से आगे परमात्मा पद बाकी रहा। जो शुद्धात्मा हो गया, वह परमात्मा की तरफ गया और परमात्मा हुआ, उसे केवलज्ञान हो जाता है। केवलज्ञान हो गया तो हो गया परमात्मा। फूल (पूर्ण) हुआ, निर्वाणपद के लायक हो गया। अत: देखने-जानने का उपयोग रखना चाहिए, पूरे दिन।

प्रश्नकर्ता : दादा, यानी शुद्धात्मा के बाद में आगे परमात्मा पद है?

दादाश्री : शुद्धात्मा, वही परमात्मा है लेकिन अभी तक इसको केवलज्ञान नहीं हुआ है। तो इस शुद्धात्मा को केवलज्ञान हुआ तो हो गया परमात्मा!

उपाय करने से ज्ञातापन चला जाता है

प्रश्नकर्ता : हम शुद्धात्मा हैं, हम ज्ञाता-द्रष्टा हैं, हमें ऐसा लगता है लेकिन फिर भी मन में जो वेदना होती है सुख-दु:ख की, तो वह क्यों होती है?

दादाश्री : वह तो होनी ही चाहिए। हमें जितने चाय के प्याले पीने हैं, उतने लेकर आए हैं अंदर। वह तो, कड़वा और मीठा दोनों पीना पड़ेगा। मीठा लगे तब मन को ज़रा अच्छा लगता है। कड़वा आए तब मन को ज़रा खराब लगता है। आपको तो दोनों को ही जानना है, राग-द्वेष नहीं करने हैं।

प्रश्नकर्ता : हम उन दोनों को जानते हैं लेकिन फिर हम कदम पीछे तो नहीं ले जाते हैं न?

दादाश्री : कदम पीछे नहीं, एडवान्स कदम उठा रहे हो। आप तो बहुत तेज़ी से आगे बढ़ रहे हो। वर्ना मैं घर पर डाँटने आता कि हमारा ज्ञान लेकर ऐसा क्यों करते हो?

उपाय करने की ज़रूरत नहीं है, सिर्फ देखते रहना है! क्रोध कितना बढ़ा, कितना कम हुआ, उसे देखते रहना है। 'उपेय' प्राप्त हो गया है इसलिए उपाय करना रहा ही नहीं। उपाय करने से आत्मा का 'ज्ञातापन' चला जाता है। यानी यथार्थ लाभ चला जाता है। 'इतना टेन्शन हुआ, इतना बढ़ा, अब चला गया'। इन ज्ञेयों को देखते रहना है, ज्ञाता रहना है जबकि उपाय करने से तो ठंडक रहती है।

आप जितने ज्ञाता-द्रष्टा रहोगे तो आपके इस पड़ोसी का जो भी हाल होता है उसके जानने वाले हो। यानी वह सारा हाल, 'मेरा हो रहा है' ऐसा नहीं होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, आप भी ज्ञाता-द्रष्टा तो हैं ही न?

दादाश्री : हाँ, नहीं तो और क्या? ज्ञाता-द्रष्टा के अलावा अन्य कुछ 'इन्हें' है ही नहीं। उससे आगे कोई दशा ही नहीं है। ज्ञायकता, ज्ञायक स्वभाव! ज्ञायक स्वभाव अर्थात् ज्ञाता-द्रष्टा। उसके अलावा और कुछ है ही नहीं और आप भी उसी में हो। आपको सिर्फ इस पड़ोसी का ध्यान रखते रहना है। पड़ोसी रोए तो आपको रोना नहीं है। पड़ोसी को सहला देना कि हम हैं तेरे साथ!

आपका दखल नहीं तो राग-द्वेष नहीं

प्रश्नकर्ता : कई बार खुद की तीव्र इच्छा होने पर भी यदि वह चीज़ प्राप्त नहीं हो, तो फिर उसका दिमाग़ घूम जाता है, सभी पर गुस्सा हो जाता है और ज्ञान में नहीं रह पाता, तो अब इन सब का *निकाल* करके खुद किस तरह से ज्ञाता-द्रष्टा रह सकता है?

दादाश्री : वह चाहे कैसी भी परिस्थिति हो, लेकिन ज्ञाता-द्रष्टा रहना हो तो रह सकता है। ज्ञाता-द्रष्टा रहना हो न, तो कुछ हद तक की परिस्थितियों में रहा जा सकता है। हद से ज़्यादा हो चुका हो, दबाव बहुत हो, वहाँ पर नहीं रह पाता। अब यदि जागृति चली जाए तब भी ऐसा रहना चाहिए कि 'यह जो जागृति चली गई है, उसे भी मैं जानता हूँ!' लेकिन जानकार ही रहना चाहिए। तो वह सब बेकार, नि:सत्व हो जाएगा। सत्व निकल जाएगा, जल जाएगा सारा। लोगों के साथ की डीलिंग कैसी होती है, वह बताओ न मुझे! राग-द्वेष होते हैं? बिल्कुल भी नहीं?

प्रश्नकर्ता : नहीं होते, पर बहुत *चीकणी फाइलों* में हो जाता है। लेकिन लोगों के साथ बहुत कम हो गए हैं।

दादाश्री : आपको आत्मा प्राप्त हुआ है इसलिए (चार्ज) राग-द्वेष नहीं होते, लेकिन डिस्चार्ज राग-द्वेष हो जाते हैं, जो *निकाली* हैं, वे। अब, जो *निकाली* हैं उन्हें राग-द्वेष नहीं माना जाता। राग-द्वेष तो जो यों पहले बीज के रूप में डलते थे न, उस चार्ज को राग-द्वेष कहा जाता है। वह तो सिर्फ गुस्सा है, और वे *पुद्गल* के गुण हैं। अत: वह कोई बहुत महत्वपूर्ण चीज़ नहीं है।

प्रश्नकर्ता : इसने ऐसा किया, तो मैं भी ऐसा करूँगा, इस तरह का जो गुस्सा है, वह चार्ज हो जाता है या नहीं?

दादाश्री : चंदूभाई इस तरह का गुस्सा कर रहे हों तब भी, यदि वह आपको अच्छा नहीं लगता तो वह डिस्चार्ज है। आपको अच्छा नहीं लगे, आपको रुचि नहीं हो तो आप जोखिमदार नहीं हो।

यह सब जो हो गया, उसे तू बस 'देखता' रहेगा, तो छूट जाएगा। आपको लेना-देना नहीं है। आपकी जवाबदारी नहीं है, चंदूभाई की जवाबदारी तो है। तो चंदूभाई को सामने वाला व्यक्ति डाँटेगा 'कैसे नालायक हो! क्या बोल रहे हो?' और थप्पड़ मार भी देगा। अत: जोखिमदारी है चंदूभाई के सिर पर! उसके बाद आप चंदूभाई से कहना, 'अतिक्रमण क्यों किया, इसलिए प्रतिक्रमण करो'।

प्रश्नकर्ता : लेकिन मान लो कि चंदूभाई ने प्रतिक्रमण नहीं किया तो वह चार्ज हो जाएगा न?

दादाश्री : नहीं, तब भी चार्ज नहीं होता। चार्ज तो होता ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन क्या प्रतिक्रमण करना चाहिए?

दादाश्री : कर लेगा तो साफ हो जाएँगी सभी फाइलें। ज्ञान से साफ करके रख दीं। जितने कपड़े धोते हैं न, उतने साफ करके रख देने हैं। उसके बाद इस्त्री में जाएँगे।

'चंदू' खेद में, आप उसे जानते रहो

अभी तक तो ऐसा कहते थे कि 'मुझे हुआ,' लेकिन अब ज्ञान के बाद उसका साथ मत देना कि 'मुझे हुआ!' अरे, आपको कैसे हो सकता है? आपको तो दादा ने अलग कर दिया! अलग नहीं कर दिया?

प्रश्नकर्ता : अलग ही हैं।

दादाश्री : हाँ, तो फिर अलग ही रखना चाहिए न! पूरा जगत् साइकोलॉजिकल (मानसिक) रोग से पीड़ित है, 'मुझे हुआ', कहकर। 'मेरा ही समधी मुझे गालियाँ दे गया', कहता है।

कोई भूल करने के बाद खेद नहीं हो, वह भी गलत है। खेद तो होना ही चाहिए। उसे आपको जानते रहना है कि चंदूभाई बहुत खेद कर रहे हैं। तब आप चंदूभाई का कंधा थप-थपा देना। इसका अवलंबन लेकर खेद बंद कर देंगे तो फिर कच्चा रह जाएगा। खेद तो होना चाहिए। जिसने उल्टा किया, उसे उसका खेद तो होना ही चाहिए। अत: खेद होने के बाद आप कहना कि, 'अब भूल के प्रतिक्रमण करो, प्रत्याख्यान लो। हम हैं न, आपके साथ। चलो शक्ति माँगो'। यह तो अक्रम विज्ञान है।

'देखने' से हिसाब साफ होते हैं

प्रश्नकर्ता : जब कोई भूल हो रही हो तब पता चलता है, हम अंदर डाँटते भी हैं कि, 'चंदूभाई, आप यह जो कर रहे हो, वह सही नहीं है'। फिर भी चंदूभाई मानता नहीं है और करता ही है।

दादाश्री : उसमें हर्ज नहीं है। क्योंकि 'देखने वाला' शुद्ध है। जिसे 'देखता' है, उसमें शुद्धि और अशुद्धि है लेकिन वह भी सापेक्ष दृष्टि से। बाकी 'देखने वाले' के लिए शुद्धि या अशुद्धि होती ही नहीं है। 'देखने वाले' के लिए तो सब समान ही है। यह सब अच्छा-बुरा तो लोगों के मन में है बाकी, भगवान की दृष्टि में अच्छा-बुरा है ही नहीं। समाज में अच्छा-बुरा है। भगवान तो कहते हैं, 'देख' लिया अर्थात् मुक्त हो गए। वह भी मुक्त और यह भी मुक्त। यानी कि हुआ क्या? अज्ञान से बाँधे हुए हिसाब को 'देखकर' जाने दोगे तो आप भी मुक्त और वह भी मुक्त। बिना 'देखे' बाँधे हुए हिसाब... 'देखकर' जाने दोगे तो मुक्त!'

रोंग सीट में बैठने से भोगवटा

प्रश्नकर्ता : दादा, चंदूभाई को जो करना है, और चंदूभाई को जो करना चाहिए, वे दोनों चीज़ें अलग हैं। उदाहरण के तौर पर चंदूभाई को सिनेमा देखने जाना है और घर में बहुत मेहमान आए हुए हों तो उसे पता है कि घर पर काम करना चाहिए लेकिन उसमें उसकी सिन्सियरिटी नहीं है, तो इसमें सिन्सियरिटी कैसे लाई जाए?

दादाश्री : आप थोड़ा धीरज रखो और जो हो रहा है, उसे 'देखते' रहो। तो बहुत हो गया! अर्थात् कम्प्लीट सिन्सियरिटी आ गई।

प्रश्नकर्ता : लेकिन चंदूभाई ऐसे हैं कि आग में ही हाथ डालने जाते हैं।

दादाश्री : नहीं, तब भी आपको 'देखना' चाहिए कि चंदूभाई ने कितना हाथ डाला, इतना हाथ डाला या इतना डाला, वह 'देखना' है। आप तो क्लियर हो, मैंने आपको क्लियर जगह पर बैठाया हुआ है। आप क्यों अनक्लियर हो जाते हो? आप किस स्थिति पर बैठते हो? रिज़र्वेशन पर न! जहाँ आपका रिज़र्वेशन किया है, वहाँ बैठते हो या अनरिज़र्व्ड जगह पर बैठते हो? चंदूभाई तो शौक़ीन हैं इसलिए अनरिज़र्व्ड जगह पर भी बैठ जाएँ ऐसे हैं।

प्रश्नकर्ता : वह जो पराई सीट पर बैठ जाते हैं, तो किस तरह वहाँ पर न बैठें और किस तरह आत्मा में ही चिपके रहें? यानी कर्तापन में आ जाते हैं बार-बार।

दादाश्री : उस सीट पर बैठ गए और शॉक लगे तो समझ जाना कि यह अपनी नहीं है। अगर शॉक लगे तो उठ जाना चाहिए। जहाँ शॉक लगे, वह कुर्सी अपनी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : शॉक लगता है फिर भी बैठे रहते हैं।

दादाश्री : तो मज़े करो! मौज करो और पकोड़े खाओ।

प्रश्नकर्ता : शॉक लगता है लेकिन उठता नहीं है, तो उठेगा कैसे? क्योंकि वह ज्ञाता-द्रष्टा नहीं रह पाता तो उसे किस तरह रहना चाहिए?

दादाश्री : जो उठते नहीं हैं, उन्हें आप देखते हो न! जो नहीं उठते हैं, वे आप नहीं हो। एक 'चंदूभाई' है और एक 'आप' हो। जो नहीं उठते हैं, वे चंदूभाई हैं। चंदूभाई से कहना, ''चलो, सोए रहो। बैठना हो तो बैठ जाओ भाई, अच्छा लगता हो तो! मैं 'देखता' रहूँगा और आप बैठे रहो।'' सॉल्यूशन (हल) तो होना चाहिए न!

प्रश्नकर्ता : यानी कि जो कुछ होता है, उसे *नोंध* (नोट) करते रहें?

दादाश्री : सभी क्रियाओं को 'देखना' है। वह यदि किच-किच करे तो उसे भी आपको देखना है कि, 'यह भी मेरा स्वरूप नहीं है',

कहना। ऐसा है दादा का यह ज्ञान। ऊपर कोई नहीं, विदाउट बॉस! *ऊपरी* के भी *ऊपरी* हैं दादा भगवान!

प्रश्नकर्ता : यानी किच-किच करता है, वह कौन सा भाग है?

दादाश्री : वह दूसरा भाग है, वह चंदूभाई के पक्ष वाला।

प्रश्नकर्ता : यानी वह जो किच-किच करता है, उसे भी देखना है?

दादाश्री : उसे भी देखना है!

प्रश्नकर्ता : यानी जो देखते हैं, वे तो कुछ बोलते ही नहीं, सिर्फ देखते ही हैं।

दादाश्री : जो देखता है उसका कोई *ऊपरी* (बॉस, वरिष्ठ मालिक) नहीं है। उसे कोई डाँटने वाला नहीं है, कुछ भी नहीं है। अनंत शक्तियाँ भरी पड़ी हैं लेकिन चंदूभाई का रक्षण करते हो न, इसलिए सारी शक्तियाँ आवरण में छुपी रहती हैं। रक्षण करते हो न चंदूभाई का? खुले आम करते हो न? इसीलिए शक्तियाँ नहीं खिलतीं! इन आज्ञाओं का पालन करके रहोगे तब भी कभी समाधि नहीं जाएगी। आप अपनी कुर्सी पर और चंदूभाई अपनी कुर्सी पर बैठे रहेंगे। आप चंदूभाई की कुर्सी पर बैठने जाते हो, उसी से यह परेशानी है। पहले की आदत जो पड़ी हुई है!

आपको तो बाहर से उठकर खुद की सीट पर बैठना है। अब अपनी सीट कौन सी है? अंदर चार-पाँच तरह की सीटें हैं। तो अपनी कौन सी सीट है कि जहाँ पर एकदम ईज़ी (सरल) लगे, वह अपनी सीट। ज़रा सी भी चुभन लगे तो जानना कि यह दूसरी सीट आई। चुभे तो समझ जाना या फिर शॉक लगे तो समझ जाना कि यह शॉक लगा। उन सभी सीटों पर नहीं बैठकर, अपनी सीट पर बैठना है।

कोई-कोई तो मक्खन लगाता है, 'चंदूभाई साहब, आप तो बहुत लायक इंसान हो, बहुत अच्छे हो।' लेकिन जब वह लगाए तब क्या हमें लगाने देना है? 'चंदूभाई, वह अपनी सीट नहीं है। वहाँ से तो दादा ने उठा दिया है।' 'मैं चंदूभाई हूँ' मानते थे, इसलिए तो मार खा रहे थे।

कोई भी *भोगवटा* (सुख या दु:ख का असर, भुगतना) आए तो समझ में आएगा कि, मैं दूसरी सीट पर बैठा हूँ, यह सीट मेरी नहीं है। तब वहाँ से उठकर वापस शुद्धात्मा की सीट पर बैठ जाना है। अपनी सीट पर बैठ जाना है लेकिन तू तो वहाँ बैठा रहता है, ऐसे जैसे कि डबल चार्ज देना हो! मन कोई भी उल्टा विचार करे कि तुरंत ही समझ जाना कि इस दूसरी, उल्टी सीट पर हूँ, अपनी सीट पर नहीं हूँ। खुद की सीट पर चले जाना तुरंत। बहुत देर बैठा रहता है, नहीं?

प्रश्नकर्ता : हाँ, दादा। ऐसा होता है।

दादाश्री : इसलिए तेरा चेहरा बिगड़ा हुआ दिखाई देता है। मैंने कहा, 'यह चेहरा क्यों बिगड़ा हुआ है?' कोई भी अड़चन आए, तो अपनी खुद की सीट पर चले जाना तुरंत। जो दोष हो चुके हैं, उनके लिए फिर माफी माँग लेना।

इस दुनिया में उलझते रहने जैसा नहीं है। कोई उलझन होने लगे या शरीर में कुछ परेशानी शुरू हो तो उठकर तुरंत अपनी कुर्सी पर बैठ जाना। उसे 'देखते' रहना, कहना 'चंदूभाई, क्यों उलझ रहे हो आप?'

जहाँ बैठे थे वहाँ से भी अंतत: फिर उठ जाना है। हम बैठाते भी हैं कि, अब चंदूभाई ऐसा कर सकते हैं, वैसा कर सकते हैं और बाद में

जब वे गद्दी पर बैठे रहते हैं, तब हम उठा देते हैं। हर एक पद पर बैठकर उठ जाना है। ज़रा मीठा लगने लगे, कुछ दिन बैठा रहे न, तो हम उठा देते हैं। उठकर वापस यहीं पर आना है आखिर में।

बातें करनी हैं, फाइल नंबर वन से

प्रश्नकर्ता : खुद का जो स्वभाव है, चंदूभाई का, उसका पृथक्करण कैसे करें?

दादाश्री : चंदूभाई का और आपका क्या लेना-देना? आप तो शुद्धात्मा बन गए न! चंदूभाई तो पड़ोसी है, फाइल नंबर वन। आपको क्या लेना-देना?

प्रश्नकर्ता : खुद की जो फाइल नंबर वन है उसे हैन्डल करना बहुत मुश्किल हो जाता है कई बार। उसे फिर डाँटना-करना पड़ता है।

दादाश्री : समझा-बुझाकर काम लेना। ज़रा ऊपर बैठे हों तो ऐसा कहना, 'नीचे बैठो, समझदार हो जाओ।'

प्रश्नकर्ता : ऐसा सब कहने पर भी फाइल नहीं मानती। कई बार ऐसा होता है।

दादाश्री : वह तो हो जाएगा दादा के नाम से कि, 'दादा का तो मानो' कहना। उसमें यदि थोड़ी-बहुत कमी रह जाएगी तो फिर से करना पड़ेगा। फिर उसमें हर्ज नहीं है। लेकिन आप कहते हो न उसे? आप फाइल नंबर वन से कहते हो तभी से आप शुद्धात्मा हो गए, इसे आश्चर्य ही कहा जाएगा न! यह प्रमाण कुछ कम है? आप उसे कहते हो, तभी से खुद किसमें हो?

प्रश्नकर्ता : शुद्धात्मा में।

दादाश्री : तो फिर इसे क्या कुछ कम कहा जाएगा? आप तो उसे फाइल नंबर वन कहते हो न, तो शुद्धात्मा पूर्ण हो गया। बाकी, अब फाइल नंबर वन के अलावा और क्या रहा? तब कहते हैं, 'सिर्फ शुद्धात्मा ही!'

वह यदि बहुत उछल-कूद करे तो कहना, 'चंदूभाई ज़रा धीरे। ऐसा मत करो। धीरे से काम करो।' दोनों अलग ही हैं। कहने वाला और करने वाला, दोनों अलग हैं। कहने वाला मतलब चेताने वाला। चेताता कौन है? चेतन। चेताने वाला और करने वाला, दोनों अलग हैं। इसलिए आप कहना, 'क्यों यह झंझट करते रहते हो, धीरे-धीरे काम लो न!' यदि एक दिन अकुला जाएँगे न, तो पाँच लोगों के केस बिगड़ जाएँगे। इसलिए आपको उसे कहना पड़ेगा कि, 'आप घर से अकुलाकर आए हो तो उस वजह से यहाँ जल्दबाजी मत करना।' ऐसा सब कहना पड़ेगा। समभाव से *निकाल* किए बगैर तो कैसे चलेगा? आप अकुलाए हुए हों और खाने के लिए बैठो तो चलेगा क्या? खाने का तो सब तरीके से करना पड़ेगा। अकुलाहट तो हो जाती है। मनुष्य देह है तो किसे नहीं होती होगी? सिर्फ ज्ञानी को ही अकुलाहट नहीं होती। अन्य सभी को तो अकुलाहट हो जाती है न! अकुलाहट हो जाती है क्या?

प्रश्नकर्ता : कई बार डिप्रेस भी हो जाते हैं।

दादाश्री : तब आप कहना कि, 'डिप्रेस मत होना। डिप्रेस क्यों होते हो, हम हैं न आपके साथ।'

प्रश्नकर्ता : फाइल नंबर एक डिप्रेस हो सकती है क्या?

दादाश्री : होती है न! डिप्रेस नहीं होगी तो और क्या होगा? एलिवेट होगी तो डिप्रेस भी होगी। खुश होगी और राज़ी होगी या नाखुश होगी, यही काम है उसका। आपको कुछ नहीं।

फाइल एक का निकाल

प्रश्नकर्ता : फाइल नंबर एक का वास्तव में *निकाल* किया, ऐसा कब कहा जाएगा?

दादाश्री : फाइल नंबर एक बहुत गर्म हो गई हो और उस समय शांत हो जाए, तब समझना कि इस फाइल का सही में *निकाल* हुआ है।

प्रश्नकर्ता : यह समझाइए ठीक से।

दादाश्री : गर्म तो होगी न, लेकिन अब तो बंद हो जाएगा न! हमेशा ही ये जो संयोग हैं न, वे वियोगी स्वभाव वाले हैं। इसलिए अपने आप वियोग हो ही जाएगा। तब तक स्थिरता नहीं छोड़नी है आपको। वह तो चला जाएगा। वे तो अपने ही किए हुए हैं। अंदर क्या किसी का कम दखल है? किसी और का दखल हो तो बात कहने जाएँ कि, 'मुझे ऐसा होता है।' इसमें तो ऐसा कह भी नहीं सकते न! अपनी दखल का परिणाम हमें नहीं समझ जाना चाहिए? और दूर रहकर देखेंगे तो चला जाए, ऐसा है।

प्रश्नकर्ता : दादा, इस फाइल नंबर एक का *निकाल* करता हूँ न, अब अंदर जो कुछ होता रहता है वह बिल्कुल दिखाई देता है तो क्या इसका मतलब यह हुआ कि फाइल नंबर एक का *निकाल* हो रहा है?

दादाश्री : क्यों नहीं होगा लेकिन? पहले तो अपने पास फाइल नंबर एक की तरफ ऐसी दृष्टि ही नहीं थी। जो कुछ करते थे उसे, 'मैं ही करता हूँ' ऐसा कहते थे। अब तो फाइल नंबर एक जो करती है, उसे आप जानते हो।

प्रश्नकर्ता : एक तो क्या है... मानों कि अंदर क्लेश हो रहा होता है और हम जानते भी हैं।

दादाश्री : क्लेश हो ही नहीं सकता। यह विज्ञान ही ऐसा है कि क्लेश नहीं हो सकता।

प्रश्नकर्ता : तो फिर जो कुछ भी अंदर होता है वह क्या है?

दादाश्री : वह सफोकेशन है, घुटन है। उलझन हो जाती है और कुछ समझ में नहीं आता, इस वजह से आपको उलझन होती है।

प्रश्नकर्ता : दादा, यह सफोकेशन कैसे दूर हो सकता है?

दादाश्री : उसके लिए तो, ज्ञानी पुरुष की सभी आज्ञाओं का ठीक से पद्धतिपूर्वक पालन करो।

देह ज्ञेय और आप ज्ञायक

प्रश्नकर्ता : अन्य सभी फाइलें हैं, उनका तो हम समभाव से *निकाल* करते हैं। लेकिन इस फाइल नंबर वन का समभाव से *निकाल* कैसे करें, यह स्पष्ट रूप से समझाइए। क्योंकि सारे दखल फाइल नंबर वन के ही होते हैं।

दादाश्री : उन दखलों को देखने से ही वे चले जाएँगे, फाइल है, ऐसा देखने से ही। टेढ़ा हो या मेढ़ा हो, उसे (खुद को) फाइल से बहुत झंझट नहीं रहती। वे 'देखने' से ही चले जाते हैं।

फाइल नंबर वन जो है वह तो कर्माधीन है। अत: फाइल नंबर वन से कुछ गलत हो जाए तो उससे आपको क्या? आज आप शुद्धात्मा हो गए हो। यह जानता है न, कि पहले बनी होगी ऐसी फाइल लेकिन अब तो आप शुद्धात्मा हो गए हो और यह जो फाइल है वह व्यवस्थित के अधीन है। अत: अब फाइल से उल्टा हो जाए, कोई बड़ा जंतु कुचल जाए, लेकिन आप शुद्धात्मा

हो इसलिए इसमें आपकी जवाबदारी नहीं है। आप तो ज्ञायक हो। आज अपने धर्म में रहने की ज़रूरत है। उस दिन अज्ञानता में अपना जो धर्म था वह किया था, कर्तापद का। अब ज्ञायक धर्म करना है। अब कर्तापद का धर्म नहीं हो सकता। उसे व्यवस्थित के ताबे में कहा गया है।

शुद्धात्मा का ज्ञायक स्वभाव है, कर्ता स्वभाव नहीं है। जिस स्वरूप हो गए हो, उस स्वरूप में रहने में क्या हर्ज है? आपको उसी स्वभाव में रहना है। ज्ञायक स्वभाव का फल क्या मिलता है? तो कहते हैं, परमानंद। वही आपको चाहिए, वह आपको मिलता रहेगा और इन फाइलों का *निकाल* समभाव से होता रहेगा।

अब, 'मेरा है', ऐसा मुँह से बोलते तो हो, लेकिन अंदर ऐसा कुछ नहीं है न! हृदय से, कोई चीज़ मेरी है, ऐसा नहीं है न! ममता भी छूट गई न! एक घंटे के लिए भी किसी से इस देह का मालिकीपन नहीं छूट सकता। देह की बात करें न तब कहता है, 'देह तो मेरी है न, इसलिए मुझे ही दु:ख होगा न!' जब तक 'मैं हूँ', ऐसा देहाध्यास है, तब तक और कुछ कह ही नहीं सकते न! और आप तो कहते हो कि, मेरी फाइल बिगड़ गई है, फाइल नंबर वन। यह ज्ञान कुछ कम नहीं है, ऐसा-वैसा ज्ञान नहीं है। यह ज्ञान इतना सरल और आसान है!

यह ज्ञान भी बहुत जागृति वाला दिया है। (सरल, आसान है) लेकिन खुद जान-बूझकर दखल करता है इसलिए जागृति कम है। यदि जागृति रहे, तब तो उसे कुछ स्पर्श ही नहीं करेगा!

ज्ञाता-द्रष्टा होते ही, दखलंदाज़ी बंद

प्रश्नकर्ता : अब दखलंदाज़ी बंद करने का उपाय बताइए, दादा!

दादाश्री : ज्ञाता-द्रष्टा हो जाओ तो दखलंदाज़ी बंद हो जाएगी। ज्ञाता-द्रष्टा तो खुद का गुणधर्म है। वह जो चारित्रमोह आया है उसे जानो कि यह चारित्रमोह है। उसे देखना और जानना है। देखोगे तो चला जाएगा।

प्रश्नकर्ता : यह तो मेरा चारित्र मोह है, मेरा डिस्चार्ज है ऐसा करके वह एक्स्क्यूज़ (माफी) नहीं लेता? खुद का गलत बचाव नहीं करता?

दादाश्री : वह ऐसा जो करता है, वह भी चारित्र मोह है लेकिन यदि खुद की रीत-रस्म बदल दे और इस दिए हुए ज्ञान को खोद डाले तो फिर इस मार्ग पर नहीं कहा जाएगा। अपने ज्ञान को ही खोद दे और पाँच आज्ञा में नहीं रहता हो, पचास प्रतिशत भी पाँच आज्ञा में नहीं रहेगा, तो सब खत्म ही हो जाएगा। यदि पचास प्रतिशत रहे तब भी बहुत हो गया। फिर यदि कुछ उल्टा-सुल्टा हो जाए न, तो वह भी चारित्र मोह है।

प्रश्नकर्ता : तो उसे भी चारित्र मोह कहा जाएगा?

दादाश्री : खुशी से कह ही सकते हैं। बहुत अच्छी तरह से चारित्र मोह कह सकते हैं लेकिन किसी और को मत बताना। लोगों से मत करना यह बात। आप मुझे कहना। लोग आपको डिस्करेज कर देंगे और यह जो स्थिर हुए हैं उसे भी अस्थिर कर देंगे। यदि मुझसे पूछोगे तो मैं बता दूँगा कि, भाई, यह क्या है!

प्रश्नकर्ता : लेकिन यह बात तो सत्य ही है न! यह चारित्र मोह में ही आता है न? और किसमें आएगा?

दादाश्री : डिस्चार्ज ही है वहाँ। लेकिन बीच में दखल ही नहीं है न, आपका! आपका दखल है तो आप ज़िम्मेदार हो। यह क्या हो रहा

है? इट हैपन्स हो रहा है। यह चारित्र मोह अर्थात् इट हैपन्स। आपका दखल नहीं है, किसी भी प्रकार का इसमें। 'ऐसा करो या वैसा करो' ऐसा दखल नहीं है। अपने आप ही जब सभी संयोग मिलते हैं तब कार्य होता है, आपका दखल नहीं है। आपकी इसमें चलेगी ही नहीं न! आपका तो पूरा कर्तापद ही खत्म हो गया है, फिर उसके लिए आप कैसे ज़िम्मेदार हो? इसलिए किसी को भी परेशान होने की ज़रूरत नहीं है। कभी यदि मन में बहुत उलझन हो जाए तो मुझसे पूछ लेना।

इन विशेष गुणों की वजह से जो *पुद्गल* पहले चार्ज हो चुका है, जो पत्थर गर्म हो चुके हैं, उसे चारित्रमोह कहते हैं! 'स्वरूप का ज्ञान' होने के बाद कर्ता नहीं रहता इसलिए दखल नहीं रहता और चारित्रमोह का *निकाल* हो जाता है!

चारित्रमोह का विलय भी किया जा सकता है! यों देखो, ज्ञाता-द्रष्टा रहो तो चला जाएगा। और अगर जागृति नहीं रखी और निश्चय नहीं किया तो चारित्रमोह पेन्डिंग रहेगा!

यह मोह किस प्रकार से जा रहा है, वह देखते रहना है। चंदूभाई खा रहे हों, पी रहे हों, किच-किच कर रहे हों तो वह सारा मोह है, आपको उसे देखते रहना है। तो वह मोह चला जाएगा। यदि दखल करते हो कि 'ऐसा खारा क्यों बनाया है' तो वापस मोह को ज़रा गाढ़ किया। दखल नहीं करना है। 'देखते' ही रहना है। यह मोह तो है लेकिन देखने से ही जाएगा, देखने से ही नष्ट होगा। चारित्र मोह अर्थात् डिस्चार्ज मोह। डिस्चार्ज मोह अर्थात् अपने हाथ में सत्ता नहीं है। अपने आप ही चला जाएगा, यदि आप वीतराग रहोगे तो।

प्रश्नकर्ता : लेकिन आखिर में चारित्र मोह तो जाना ही चाहिए न?

दादाश्री : वह चारित्र मोह जा रहा है। ये जो फाइलें हैं, वे चारित्र मोह वाली ही हैं। फाइलों का *निकाल* हो जाएगा तो फुल गवर्नमेन्ट हो जाएगा। अतः (चारित्रमोह) चला जाना चाहिए ऐसा नहीं है, निकालना नहीं है, जा ही रहा है।

पूरे ज्ञान का सार क्या कहता है? यदि तूने 'रियल' जान लिया है तो, 'रिलेटिव' तो 'साइन्टिफिक सरकमस्टेन्शियल एविडेन्स' है। अतः तू देखता रह। तू कुछ भी मत करना। जो हो रहा है, उसे होने दे। जो नहीं हो पा रहा है, वह मत करना। सिर्फ देखता रह!

गलन को 'देखते' रहो

प्रश्नकर्ता : ज्ञान लेने के बाद का जो *गलन* है उसे देखते ही रहना है या उसकी गति बढ़ाने के लिए कुछ करना चाहिए?

दादाश्री : गति बढ़ाने वाला कौन? कर्ता चला गया फिर गति बढ़ाने वाला कौन?

प्रश्नकर्ता : उसे अपने आप ही होने देना है?

दादाश्री : देखते ही रहना है। जो होता है उसे देखते ही रहना है। आपने जो *पूरण* किया था, वह अब अपना फल देकर *गलन* होगा। कड़वा होगा तो कड़वा और मीठा होगा तो मीठा। फल देकर दोनों का *गलन* हो जाएगा, उन्हें आपको देखते रहना है। गति बढ़ाना वगैरह, ऐसा कोई दखल करना ही नहीं है।

अब इस सीधे साइन्स (विज्ञान) में यदि थोड़ी सी भी भूल करोगे तो मार पड़ जाएगी। कुछ बदलाव हो जाए तो मेरे पास आ जाना, मैं फिर से ऑपरेशन कर दूँगा। नासमझी से बदलाव होने की संभावना तो है न!

प्रश्नकर्ता : हम छोड़ दें वह भूल है?

दादाश्री : ज्ञातापन तो छोड़ा ही नहीं जा सकता। ज्ञातापन ही अपना स्वभाव है और ज्ञेय तो निरंतर रहते ही हैं। वह जो मन है न, वह आखिर में आयु पूरी होने तक फाइलें दिखाता रहेगा। वह दिखाता रहेगा और हम देखते रहेंगे। ज्ञेय नहीं रहेंगे तो ज्ञाता खत्म हो जाएगा। अत: ये जो ज्ञेय हैं, वे सिनेमा की तरह हैं। मन अंत तक दिखाएगा। इसलिए ज्ञाता कभी खत्म नहीं होगा।

संयोगों का ट्रैफिक 'देखना' चूकाए

प्रश्नकर्ता : जो कुछ भी मेरा डिस्चार्ज आता है, उसे मैं सिर्फ 'देखता' रहता हूँ, दूसरा कुछ नहीं करता। क्या यह ठीक है?

दादाश्री : हाँ, ठीक है।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान एक सरीखा क्यों नहीं रहता? उतर जाता है वापस, वापस चढ़ता है, ऐसा क्यों?

दादाश्री : नहीं उतरता। एक बार चढ़ने के बाद फिर नहीं उतरता। ज्ञान तो ज्ञान ही रहेगा। एक बार यदि अंधा हो गया तो फिर दिखाई देना बंद हो जाता है। लेकिन इसमें तो फिर से दिखाई देता है न?

'केवल निजस्वभावनुं, अखंड वर्ते ज्ञान,
कहीए कैवल्यज्ञान ते, देह छतां निर्वाण।'

- श्रीमद् राजचंद्र

'भले ही देह है लेकिन फिर भी निर्वाण है', ऐसा कहते हैं।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, अखंड रहना बहुत कठिन है।

दादाश्री : अरे, जिसका खंड हुआ, उसे अखंड होते देर नहीं लगेगी। जो खंड है, उसे अखंड होने की झंझट नहीं करनी है। अखंड होने के लिए ही वह खंड वाला हुआ है।

प्रश्नकर्ता : दादा, इसमें ऐसा होता है कि कार्य शुरू करने से पहले इसका ध्यान रहता है। उसके बाद काम में मग्न हो जाते हैं तब तो भूल ही जाते हैं आधे घंटे तक। काम पूरा होने के बाद वापस प्रतीति आती है।

दादाश्री : ऐसा है न, यह कैसा है? वह आपको समझाता हूँ कि अपने यहाँ एक जगह पर, कोठी (बड़ौदा का एक एरिया) के ढलान पर जो चौराहा है, वहाँ एक बड़ी कुर्सी डालकर सभी बैठे हुए हों। अब हमें सामने की ओर देखना है तब अगर बीच में बस आ जाए तो क्या हम देख पाएँगे? यानी कि जब तक बसें आती-जाती रहेंगी, तब तक सामने अखंड रूप से नहीं दिखाई देगा। अरे! बसों का आना-जाना बंद हो जाएगा! रात होते ही अपने आप बसें बंद हो जाएँगी, एकदम से।

प्रश्नकर्ता : दादाजी, सब को यह बच्चों की किताब सा उदाहरण एकदम से कैसे दे दिया?

दादाश्री : हाँ, लेकिन क्या हो सकता है? काम आ जाता है न! उसे डर लगता है कि अब यह अखंड कब होगा! डर रखने जैसा नहीं है। ये सारी बसें बंद हो जाएँगी तब पूरा ही रहेगा, अखंड ही। तेरा ज्ञान तो अखंड ही है। इन बसों का अवरोध है और बसों का संयोग है। वे संयोग फिर वियोगी स्वभाव वाले हैं। वे तेज़ी से चले जाएँगे। अब तू नए संयोग खड़े मत करना।

प्रश्नकर्ता : दादा, यह सब समझने के लिए दस दिन तक बैठना पड़ता लेकिन आपने तो एक ही वाक्य में समझा दिया कि बीच में बसें ही

दौड़ रही हैं। इस पर से तो हमें अनुभव ले लेना चाहिए कि अब बेकार झंझट क्यों करें?

दादाश्री : अरे! यह आपका मोक्ष ही है। यह तो, बसें आती-जाती रहती हैं तो उसके लिए बस वालों को हम कुछ नहीं कह सकते? मोक्ष के हेतु के कारण हमें कुछ भी नहीं कहना चाहिए। वे दो मंज़िल वाली भी आ सकती हैं और एक मंज़िल वाली भी आ सकती हैं। फिर यदि हाथी जा रहा होगा तब भी नहीं दिखाई देगा। लेकिन अब वे संयोग हैं। अत: जितने हैं, उतने आकर चले जाएँगे और बाद में फिर वह अखंड ही रहेगा। है ही अखंड। वह अखंड नहीं रहता लेकिन कई लोगों को दादा (का निदिध्यासन) तो अखंड रहते हैं न?

तो यों समझ में आ जाएगा न, अखंड! देखो न, कितनी उलझन थी कि यह खंडित हो गया, अब अखंड कब होगा? तो अब किसकी मानता मानें? अखंड ही है यह। अब आपके समझ में आ गया, अखंड? कठिन लगता था न, बहुत कठिन, 'ओहोहो! इसका कब अंत आएगा और कब वह होगा?' आ चुका है अंत! यहाँ उसके अभ्यास की ज़रूरत है। यह अक्रम विज्ञान है इसलिए टच में आने की ज़रूरत है। ऐसा विज्ञान एक बार मिलता है, उसकी यह जागृति जाती नहीं है। जो एक बार मुझसे मिला हो और ज्ञान लिया हो तो उसकी जागृति नहीं जाती।

अब ज्ञाता-द्रष्टा रहना, वही चारित्र है। लेकिन आप रह नहीं पाओगे। क्योंकि आपके साथ तो हज़ारों बलाएँ हैं। बीच में बसें आती-जाती रहती हैं तो उसमें ज्ञाता-द्रष्टा कैसे रह पाओगे? आप कहते हो कि इन बसों के कारण कुछ दिखाई नहीं देता, है तो सही लेकिन बसों की वजह से दिखाई नहीं देता कुछ भी। तब यदि मैं पूछूँ कि, 'वे बसें आपकी बुलाई हुई हैं या अन्य किसी के द्वारा?' तब कहते हैं, 'हाँ, उन्हें तो मैंने ही बुलाया हैं'। मैंने पूछा, 'दो मंज़िला भी बुलाई?' तब कहते हैं, 'हाँ। दो मंज़िला भी बुलाई।' आपने ही जमाई हुई हैं ये बाज़ी। मेरी सभी बसें बंद हो गई हैं और आपकी तो चल ही रही हैं न!

प्रश्नकर्ता : इन बसों का ट्रैफिक आने से दिखाई देना बंद हो जाता है तो ऐसे में क्या देखें?

दादाश्री : ज्ञेय दिखाई देंगे। यह आत्मा आईने जैसा है। आईने की जगह पर यदि आत्मा को रखोगे तो जो आईने में जो है, वह वही चीज़ है जो सामने थी। सामने जो सजाया हुआ खंभा था। वह आईने में दिखाई देना बंद क्यों हो गया? खंभा अंदर झलकता रहता था। वह झलकना बंद हो जाए तब देखने वाला शोर मचाता है कि, मेरे आत्मा में अब कुछ दिखाई नहीं देता। तब कहते हैं, भैया, बीच में ये बसें जा रही हैं, इसलिए।

आत्मा ज्ञाता-द्रष्टा है। वह इन आँखों की तरह नहीं देखता है, यों उसमें झलकता है। ज्ञाता-द्रष्टा रहने में क्या कोई क्रिया करनी पड़ती है? झलकता है तब क्या इस आईने को कोई मेहनत करनी पड़ती है? यहाँ से यों जाए तो अंदर दिखाई देता है।

प्रकृति के ज्ञाता-द्रष्टा वह 'चारित्र'

पहले हम मानवस्वभाव में थे। उसमें यह अच्छा और यह बुरा, ये अच्छे विचार और ये बुरे विचार, ऐसा था। अब आत्मस्वभाव में आ गए इसलिए सभी विचार एक जैसे! विचार मात्र ज्ञेय है और 'हम' ज्ञाता हैं। ज्ञेय-ज्ञाता का संबंध है। फिर कहाँ रही दख़ल, वह कहो?

अब अगर कोई पूछे, 'इस ज्ञान के बाद भी चंदूभाई का वर्तन ऐसा क्यों है?' तब मैं कहूँगा कि 'भाई, इनके वर्तन की तरफ मत देखना'। क्योंकि इनकी बिलीफ (मान्यता) अलग है और इनका वर्तन अलग है। बिलीफ कुछ ओर ही प्रकार की है।

आपका वर्तन अलग है और बिलीफ में अलग है, ऐसा आपको अनुभव हुआ है न? क्योंकि यह जो वर्तन है वह पहले की बिलीफ के आधार पर है और आज आपको नई बिलीफ मिली है। अत: इसका जो वर्तन आएगा वह कुछ अलग ही प्रकार का आएगा। पहले बिलीफ में आता है उसके बाद वर्तन में आता है।

आत्मा की प्रतीति बैठना, वही सम्यक् दर्शन है या आत्मा के अलावा कुछ और है? तो कहते हैं, *पुद्गल*।

प्रश्नकर्ता : अत: यह जो बिलीफ है न, क्या वह सामान्य मान्यता का शब्द है?

दादाश्री : दर्शन तो बिलीफ से भी बहुत आगे की चीज़ है। अभी आपको अंदर चेतावनी देता है या नहीं?

प्रश्नकर्ता : चेतावनी देता है।

दादाश्री : हाँ, तो वह खुद, अनुभव हो जाने के बाद चेतावनी देता है। अब, उसे ज्ञान कहते हैं। और चारित्र कब कहा जाएगा? जब बाहर की दखलंदाज़ी न रहे। तब चारित्र रहता है। नौकरी वगैरह कुछ ऐसा सब, कपड़े नहीं पहनने होते, बाकी कोई झंझट नहीं रहती। चारित्र अर्थात् ज्ञाता-द्रष्टा, बस। लेकिन वह किसके ज्ञाता-द्रष्टा? 'चंदूभाई क्या कर रहे हैं' आप उसके ज्ञाता-द्रष्टा। खुद की प्रकृति के ज्ञाता-द्रष्टा रहना, उसे कहते हैं चारित्र।

शुद्धात्मा की सीट पर बैठकर ज्ञाता-द्रष्टा

ज्ञाता-द्रष्टा रहेंगे तो सब छूट जाएगा। छोड़ने से नहीं छूटता। ज्ञाता-द्रष्टा रहोगे न, तो छूट जाएगा। एक ही दिन, रविवार के दिन, एक दिन शुद्धात्मा की कुर्सी पर बैठना, फिर सबकुछ अच्छा चलेगा! सिर्फ, ज्ञाता-द्रष्टा रहना है। चंदूभाई क्या कर रहे हैं, वह देखते रहना है।

प्रश्नकर्ता : अब चंदूभाई गलत करे या सही करे, उन्हें देखना है?

दादाश्री : गलत करते हैं या नहीं, वह गलत या सही होता ही नहीं। सही-गलत समाज के अधीन है। भगवान के वहाँ सही-गलत नहीं है। भगवान के वहाँ फायदा-नुकसान भी नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो समाज और व्यवहार के अधीन हमारा जो भाव है, हमारे जीवन का व्यवहार भाग, उसे कैसा रखना है?

दादाश्री : व्यवहार तो ऐसा रखना है कि लोग उसकी प्रशंसा करे, उसे आदर्श कहे, ऐसा रखो। लोग कहे कि, 'भाई, चंदूभाई की बात नहीं करना, वे बहुत अच्छे व्यक्ति हैं।' जबकि ये तो खुद के घर में ही अच्छे नहीं दिखते। भाई, अगर पड़ोसी अच्छा न कहे तो हर्ज नहीं लेकिन घर में भी अच्छे नहीं दिखते।

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसका क्या उपाय है?

दादाश्री : यह जो बताया वही, ज्ञाता-द्रष्टा रहना है।

प्रश्नकर्ता : हम ज्ञाता-द्रष्टा तो रहते हैं लेकिन चंदूभाई से उल्टे-सीधे काम हो जाते हों और परिणाम गलत आते हों, तो उन्हें सुधारने के लिए हमें क्या करना है?

दादाश्री : कुछ भी नहीं सुधार सकते। उल्टा

बिगाड़ोगे। अगर अभी अस्सी प्रतिशत बिगड़ा है तो उसे नब्बे प्रतिशत करोगे।

प्रश्नकर्ता : चंदूभाई का सुपरविज़न (निरीक्षण) करना है और उसे गाइडेन्स (मार्गदर्शन) वगैरह कुछ नहीं देना है?

दादाश्री : सुपरविज़न का मतलब सिर्फ देखना और जानना है। गाइडेन्स वगैरह कुछ नहीं देना है।

प्रश्नकर्ता : सुधारना या कोई कर्तापद में नहीं रहना है, सुधारने की ज़रूरत ही नहीं है?

दादाश्री : सुधरता ही नहीं। बल्कि सुधारने जाता है तो खुद बिगड़ जाता है।

प्रश्नकर्ता : उसे कहना चुप, मुझे बैठे रहने दे, खबरदार यदि...

दादाश्री : नहीं, खबरदार नहीं कहना है। हम सब पुलिस वाले नहीं हैं। हम तो भगवान हैं। पुलिस वाले ऐसा करते हैं, खबरदार और नाखबरदार, हम तो भगवान हैं, 'देखते' रहना है। आप अपने ज्ञाता-द्रष्टा स्वभाव में हो और वह कर्ता स्वभाव में। कर्ता स्वभाव वाला परेशान करता ही रहेगा। *पुद्गल* कर्ता स्वभाव वाला है।

ज्ञाता-द्रष्टा रहने में बाधक हैं पूर्वकर्म

प्रश्नकर्ता : आपने वह जो ज्ञाता-द्रष्टा रहने को कहा है तो ज्ञाता-द्रष्टा रहने में हमें कौन सी चीज़ रुकावट डालती है?

दादाश्री : ज्ञाता-द्रष्टा रहने में पूर्वकर्म के उदय रुकावट डालते हैं। अब पिछले सभी कर्म उलझाएँगे। मन में विचार आएँगे, तो आपको उनमें नहीं उलझना है। उनमें एकाकार नहीं हो जाना है। वे ज्ञेय हैं और आप ज्ञाता हो। ज्ञेय-ज्ञाता का संबंध ही रहा है इस जगत् के साथ। अन्य कोई संबंध है ही नहीं अब। अब अन्य किसी संबंध में उतरना ही नहीं है।

प्रश्नकर्ता : द्वंद्व, वे स्पंदन निर्मूल नहीं हुए हैं न?

दादाश्री : नहीं। वे ज्ञेय के रूप में ही रहे हुए हैं न! वे सभी ज्ञेय रूपी हैं। और आपको मन में उलझन होती है कि, भाई! ये मुझसे चिपक गए हैं या क्या है? आपको तो इतना ही देखना है कि दिनोंदिन राग-द्वेष कम हो रहे हैं या नहीं।

प्रश्नकर्ता : आत्म तत्त्व को जानने के बाद में जो भी प्रश्न होते हैं या उलझनें होती हैं, वह अपना विभाग नहीं है न?

दादाश्री : वे सब ज्ञेय हैं और डिस्चार्ज रूपी हैं और आपके ताबे में नहीं हैं, व्यवस्थित के ताबे में हैं। आपका और उनका स्वभाव अलग है। वे ज्ञेय स्वभाव वाले हैं और हम ज्ञाता स्वभाव वाले हैं। ज्ञेय चीज़ें वीतराग हैं, ज्ञाता भी वीतराग है और बीच में अहंकार है, वह राग-द्वेष करवाता है। अहंकार चला गया है इसलिए ज्ञेय के प्रति वीतरागी भाव रखना है। ज्ञेय को *तरछोड़* (तिरस्कार सहित दुत्कारना) लगाएँगे तो वह भी *तरछोड़* लगाएगा। फिर भी यदि अंदर से खराब पौद्गलिक भाव निकलें तो आपको प्रतिक्रमण करना चाहिए। इस ज्ञान की प्राप्ति के बाद जो कुछ भी बाकी बचता है, वह सब ज्ञेय के रूप में रहता है। अंदर जो चीज़ उत्पन्न हुई, वह ज्ञेय है और हम ज्ञाता हैं।

उदयकर्म में दखल न करे, वह है ज्ञान

जब उदयकर्म में दखल देते हैं, उस क्षण बुद्धि होती है और जब उदयकर्म में दखल नहीं देते, उस क्षण ज्ञान रहता है। ज्ञान और बुद्धि का है वह भेद।

प्रश्नकर्ता : दखल सिर्फ बुद्धि से ही होता है न?

दादाश्री : दखल सिर्फ बुद्धि की ही है सारा। इस बुद्धि ने ही सारी झंझट और गड़बड़ की है। ज्ञान में ऐसा कुछ है ही नहीं। ज्ञान में तो दखल होता ही नहीं है न! हाँ, यदि चंदूभाई दखल करें और ज्ञान उसे जाने तो आप मुक्त।

किसने लिया, किसने दिया, इन्होंने इन्हें दिया और इन्होंने लिया, भगवान ऐसी कोई बही नहीं रखते। कितने समझदार हैं! बही ही नहीं रखते। हिसाब पूरा साफ, बिना बही के हिसाब साफ! इसीलिए मैंने कहा है न कि भगवान बही नहीं लिखते और यह जो बुद्धि है, वह बही लिखती है। हस्तक्षेप करती है उदयकर्म में, दखल देती है उदयकर्म में। अरे, जो देता है, वह भी उदयकर्म है और वह लेता है तो वे उसके उदयकर्म। उसमें तुझे बीच में हस्तक्षेप करने का रहा ही कहाँ? उदयकर्म देता है न? और लेने वाला भी उदयकर्म है। वहाँ पर फिर जमा-उधार करने को रहा ही कहाँ? लेकिन यह बुद्धि का दखल है। वह यदि उदयकर्म में दखल न करे, तो उसी को ज्ञान कहते हैं। पूरा ज्ञान, हाँ! यहाँ पर आपके पास कुछ हद तक का ज्ञान तो है लेकिन केवलज्ञान उसे कहते हैं कि उदयकर्म में दखल न करे! आपके पास सम्यक् ज्ञान तो है ही। लेकिन अब केवलज्ञान होने से पहले ऐसी सारी चीज़ें होनी चाहिए न? ज्ञान तो है ही, लेकिन केवलज्ञान में यह सब रुकावट डालेगा न?

प्रश्नकर्ता : केवलज्ञान होने में क्या बाकी रहा?

दादाश्री : अभी भी बुद्धि के कहाँ-कहाँ पर दखल हैं, वह 'देख' लेना। अत: यदि चंदूभाई बुद्धि से दखल करते हैं तो उसमें हर्ज नहीं है। आपको तो सिर्फ उस दखल में एकाकार नहीं होना है। यदि आप 'देखते' हो तो आप अपने हिसाब में हो। और उसमें यदि हिसाब चूक जाते हो तो उसे उदयकर्म में दखल किया कहा जाएगा। चंदूभाई का उदयकर्म है लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिए कि आप उसमें एकाकार हो जाओ, तब आप पर उसका असर नहीं होगा।

ज्ञाता-द्रष्टा के अलावा बाकी सब दखलंदाज़ी

प्रश्नकर्ता : तो फिर इसका अर्थ क्या ऐसा हुआ कि जहाँ ज्ञाता-द्रष्टा नहीं रह पाते, वहाँ पर दखलंदाज़ी है?

दादाश्री : हाँ, ज्ञाता-द्रष्टा के अलावा बाकी सब दखलंदाज़ी, उसी को संसार कहते हैं! लेकिन अब यह तो वास्तविकता है कि ज्ञाता-द्रष्टा तो नहीं रहा जा सकता कि भाई, मनुष्य की इतनी शक्ति नहीं है। वर्ना, जो ज्ञाता-द्रष्टा रहा, वह तो भगवान ही हो गया! लेकिन तब तक क्या करना चाहिए? जब अंदर दखल देने का विचार आए तो उस समय प्रतिक्रमण कर लेना चाहिए। तब फिर उसे दखल नहीं कहा जाएगा। दखल होने जा रहा था लेकिन आपने मोड़ लिया।

प्रश्नकर्ता : यह तो बहुत बड़ी बात कर दी। लेकिन हर बार इंसान 'देखता' रहे, ऐसा रह नहीं सकता न?

दादाश्री : नहीं रह सकता, तो फिर उसे प्रतिक्रमण करने चाहिए। आपको विचार आएँ, उनके लिए प्रतिक्रमण करने चाहिए। एक्ज़ेक्ट ज्ञाता-द्रष्टा नहीं रह पाते तो प्रतिक्रमण करना चाहिए।

प्रतिक्रमण तो किसे करना है? हमें खुद को नहीं करना है। अपना यह अक्रम विज्ञान है

न, इसलिए ज़रा तगड़े कषाय रहे हुए हैं। अब किसी को डाँटा तो ऐसा डाँटा कि उसे दुःख हो गया। तब 'आपको' 'चंदूभाई' से कहना चाहिए कि, 'भैया! आपने अतिक्रमण क्यों किया? तो अब प्रतिक्रमण कर लो'। 'आपको', शुद्धात्मा को प्रतिक्रमण नहीं करने हैं!

अतिक्रमण *पुद्गल* का है और प्रतिक्रमण भी *पुद्गल* का है। शुद्धात्मा का ज्ञायक स्वभाव है! 'मैं शुद्धात्मा हूँ', ऐसा निर्णय हो जाना, उसी को आत्मानुभव कहते हैं!

तीर्थंकरों की खोज

आप शुद्धात्मा, लेकिन आपका अभी एक तरफ (*लक्ष*) शुद्धात्मा में है और एक तरफ... दूसरी तरफ भी है आपका अभी। इसलिए आपकी जागृति उसमें भी चली जाती है। मेरी जागृति नहीं जाती। अभी तो आप जैसे-जैसे आगे इस अनुसार फाइलों का *निकाल* करोगे न, वैसे-वैसे जागृति वापस आती जाएगी। तब फिर अलग रहेगा। फिर, अलग-अलग रहेगा तो आपको परेशान नहीं करेगा। तब तक ज़रा दखल देता रहेगा।

हमारी दृष्टि से देखना चाहो तो आपको, हमारी जैसी दृष्टि विकसित करनी पड़ेगी कि यह पूरा जगत् निर्दोष है। दोषित दिखाई देता है, वही भ्रांति है। आपको गालियाँ देने वाला, आपको दोषित दिखाई देता है, वह भ्रांति है। क्योंकि गालियाँ देने वाला तो पावर चेतन है और दरअसल चेतन तो शुद्धात्मा है। यानी वह गालियाँ दे फिर भी आपको तो उसे शुद्धात्मा ही देखना होगा। सामने वाले का पावर चेतन आपके हिसाब के अधीन है। वे हिसाब चुकाने पड़ेंगे। हिसाब चुक जाने के बाद कुछ भी नहीं रहता।

प्रश्नकर्ता : सिर्फ चिंतवन करने से (चार्ज) प्रतिष्ठित आत्मा शुद्धात्मा हो जाएगा?

दादाश्री : हाँ, इसलिए तो मैं आपसे कहता हूँ कि आप शुद्धात्मा हो गए हो। इसलिए फिर आप 'मैं शुद्धात्मा हूँ, मैं शुद्धात्मा हूँ' ऐसा करते रहोगे तो उस रूप होते जाओगे।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जब बन ही गए हैं तो फिर 'शुद्धात्मा हूँ' ऐसा करने की ज़रूरत क्या है?

दादाश्री : हाँ, अभी आपको यह शुद्धात्मा की प्रतीति हुई है। प्रतीति हुई इसलिए आपको यह जागृति रहा ही करेगी, वह खुद जैसा चिंतवन करेगा वैसा होता जाएगा। इस चिंतवन को चिंतवन कहते हैं और उस चिंतवन को साइकोलॉजिकल इफेक्ट कहते हैं, अज्ञानी के चिंतवन को। क्योंकि वह मानसिक अवस्था है। इसमें मानसिक नहीं है, चिंतवन है यह तो।

यह तीर्थंकरों की खोज है! तू शुद्धात्मा है, तू शुद्ध ही है, वर्ना दूसरा कुछ चिंतवन करेगा तो वैसा हो जाएगा। इसलिए कहता हूँ कि अपने आप के लिए शुद्ध ही चिंतवन करना, कि 'मैं तो शुद्ध ही हूँ, मैं शुद्ध ही हूँ। चंदूभाई कोई दिक्कत नहीं है', कहना। 'आपको जैसे दखल करना है वैसे करना, हम तो शुद्ध ही हैं', कहना।

'मैं चंदूभाई हूँ, इन शास्त्रों का ज्ञान मुझे कण्ठस्थ है, मुझे श्रुतज्ञान कण्ठस्थ है', भगवान ने इन सब को 'देहाध्यास' कहा है। क्योंकि 'मैं चंदूभाई हूँ' यह अध्यास टूटा नहीं है। 'मैं शुद्धात्मा हूँ' यह *भान* हुआ कि सारा हल आ गया!

पाँच आज्ञा पालन से ज्ञाता-द्रष्टा पद

प्रश्नकर्ता : 'आप शुद्धात्मा हो ही, लेकिन उसका भान रहना चाहिए' इसे समझाइए।

दादाश्री : आप शुद्धात्मा तो हो। मैंने आपको ज्ञान दिया, उसके बाद शुद्धात्मा हो, लेकिन भान

रहना चाहिए। आज्ञा में रह पाओगे तो मैं समझूँगा कि भान है इनको। पचास प्रतिशत आज्ञा में, ज़्यादा नहीं। अरे, पच्चीस प्रतिशत आज्ञा में रहोगे न, तब भी मैं कहूँगा कि, इन्हें भान है। और कितने प्रतिशत से पास करें? बताओ।

प्रश्नकर्ता : सही है, पच्चीस प्रतिशत तो रहना ही चाहिए।

दादाश्री : अब, चाय के कप में पच्चीस प्रतिशत शक्कर डालने से चलेगा क्या? तो वहाँ सौ प्रतिशत शक्कर चाहिए और 'यह' करते समय पच्चीस प्रतिशत!

पाँच आज्ञा का पालन करना, उसे पुरुषार्थ कहते हैं और पाँच आज्ञा पालन के परिणाम स्वरूप क्या होता है? ज्ञाता-द्रष्टा पद में रह पाते हैं। यदि कोई हम से पूछे कि यथार्थ पुरुषार्थ किसे कहेंगे? तब हम कहेंगे, ज्ञाता-दृष्टा रहना, वह। ये पाँच आज्ञा, ज्ञाता-द्रष्टा रहना ही सिखाती हैं न! जब रियल और रिलेटिव देख रहे हों तब जो आगे-पीछे के विचार आते हैं, उन्हें 'व्यवस्थित' कहकर बंद कर दो। अगर देखते समय आगे का विचार उसे परेशान कर रहा हो तब 'व्यवस्थित' कह दें तो वह बंद हो जाएगा। अत: अपना देखना वापस चालु रहता है। उस समय कोई फाइल परेशान कर रही हो तो समभाव से *निकाल* करने के बाद भी अपना वह चालु रहता है। इस तरह से आज्ञा ज्ञाता-द्रष्टा के पद में रखती है।

हमारी आज्ञा में रहना, वह पुरुषार्थ है। पुरुष (आत्मा) बनने के बाद और क्या पुरुषार्थ है?

और यदि आज्ञा का फल आ चुका हो, तो खुद बगैर आज्ञा के सहज स्वभाव में रह सकता है। वह भी पुरुषार्थ कहलाता है, बहुत बड़ा पुरुषार्थ कहलाता है। यह आज्ञा से पुरुषार्थ है जबकि वह स्वाभाविक पुरुषार्थ है!

केवलज्ञानी रहते हैं, निरंतर ज्ञाता-द्रष्टा पद में

प्रश्नकर्ता : अब यह शुद्धात्मा की जागृति और ज्ञाता-द्रष्टा भाव रहता है, उस समय 'मैं कुछ अलग ही चीज़ हूँ' ऐसा अनुभव होता है और ठंडक महसूस होती है।

दादाश्री : ऐसा तो लगेगा ही न! इसकी बात ही अलग है, ऐसा लगता है और हमें बहुत ठंडक महसूस होती है। उसे तो केवलज्ञान की ठंडक कहा जाता है। कोई-कोई महात्मा केवलज्ञान की ठंडक का अनुभव कर सकते हैं। अपने कई महात्माओं को तो कई बार अंदर ऐसे क्षण आते हैं तब 'मैं केवलज्ञान स्वरूप हूँ' ऐसा भी बोलते हैं। ऐसा बोल सकते हैं, क्योंकि कभी-कभी केवलज्ञान स्वरूप हो जाता है व्यक्ति। केवलज्ञान का एक-एक अंश उत्पन्न हो चुका है। अब जैसे-जैसे अंदर के उधार चुकता हो जाएँगे और जो ऑवर ड्राफ्ट लिए हैं न, वे सारे जितने चुकता हो जाएँगे वैसे-वैसे यह सब समझ में आएगा।

संपूर्ण ज्ञाता-द्रष्टा तो हो गए हैं सभी, लेकिन यदि निरंतर ज्ञाता-द्रष्टा रहें तो केवलज्ञानी!

यह तो ऐसा है न, कि ज्ञाता-द्रष्टा संपूर्ण रूप से रहें वे केवलज्ञानी हैं। लेकिन आंशिक रूप से रहें न, तो (केवलज्ञान) कुछ-कुछ अंश करके बढ़ता जाता है। जैसे-जैसे कर्मों का *निकाल* (निपटारा) होता जाता है, वैसे-वैसे केवलज्ञान के अंश बढ़ते जाते हैं। यानी कि इसमें कोई दखल नहीं है। यही रास्ता है, यही हाईवे है। जैसे-जैसे ये फाइलें कम होती जाएँगी, वैसे-वैसे ज्ञाता-द्रष्टापन का प्रमाण बढ़ता जाता है। वह (ज्ञाता-द्रष्टापन) बढ़ते-बढ़ते केवलज्ञान तक पहुँचेगा, एकदम से नहीं हो सकता।

वर्तमान में बरतते रहना, वही केवलज्ञान

प्रश्नकर्ता : अपने लिए तो अब वर्तमान में ही बरतते रहना, वही केवलज्ञान है न?

दादाश्री : हाँ, केवलज्ञान, इसके अलावा और कुछ नहीं है। भूतकाल का उपयोग नहीं, भविष्य काल का उपयोग नहीं, वर्तमान काल का उपयोग।

हमने अक्रम ज्ञान ऐसा दिया है कि भूतकाल भूल जाओगे। भविष्य काल व्यवस्थित के हाथ में सौंप दिया। अब बचा क्या? वर्तमान। केवलज्ञान स्वरूप उत्पन्न हो सके ऐसा अपना ज्ञान दिया गया है।

भूतकाल कोई भूलाया जा सके, ऐसा नहीं है, लेकिन भूतकाल को देखो और जानो। जो भी याद आता है उसे देखो और जानो, तो वह भूल जाने के समान ही हुआ। ऐसा करते-करते भूल जाएँगे तब फिर आपको मेहनत नहीं करनी पड़ेगी, सहज भाव से। तब तक पुरुष को पुरुषार्थ और पराक्रम करने हैं।

यानी कि देखना और जानना ही है। और कुछ आप करने जाओगे तो भी कुछ बदल सके ऐसा नहीं है। बाकी तो सब व्यर्थ प्रयत्न हैं। क्योंकि पुरानी जो आदतें हैं न, वे छूटती नहीं हैं। बाकी, अपना स्वरूप यह जो प्राप्त हुआ है वही स्वरूप है। इस जगत् में अन्य कुछ भी जानने जैसी चीज़ नहीं है। यह पूरा केवलज्ञान स्वरूप ही है। तो इस तरह देखते-देखते जैसे-जैसे पुरानी आदतें छूटती जाएँगी, वैसे-वैसे मज़बूत होता जाएगा। यह शरीर क्रिया करें उससे दिक्कत नहीं है। शरीर की जो आदतें हैं उससे दिक्कत नहीं है। हमें वापस शरीर में एकाकार होने की आदतें हैं। उपयोग उसमें चला जाता है, उपयोग इसमें चला जाता है। उपयोग यदि इनमें से छूट जाए तो हो जाएँगे मुक्त। यह तो केवलज्ञान स्वरूप है, यह जो ज्ञान दिया है वह केवलज्ञान स्वरूप है।

प्रश्नकर्ता : केवलज्ञान स्वरूप ही है?

दादाश्री : बस, केवलज्ञान स्वरूप, अन्य कुछ नहीं। तृप्ति हो जाती है न स्वरूप की, उससे रौद्रध्यान-आर्तध्यान बंद हो जाते हैं। हमें बंद नहीं करना पड़ता।

अपना मूल स्वरूप केवलज्ञान स्वरूप है। अब बाहर का कोई हल्ला नहीं होगा न? अपना यह जो प्राप्त हुआ है, इसे खो दे, ऐसा हल्ला नहीं होगा न? बस, खुद को इतना मज़बूत कर लेना है कि कर्म के उदय चाहे कैसे भी आने हों वे आएँ, जैसे आ रहे हों तो 'आओ' कहना। अब मुझे हर्ज नहीं है। बहुत ज़बरदस्त उदय आएँ चारों तरफ से, तो आपको अपनी गुफा में बैठे-बैठे देखते रहना है। बाहर निकलना ही नहीं है न! अंदर, होम डिपार्टमेन्ट में, बाहर फॉरेन में हाथ डालना ही नहीं है। देखते ही रहना है, स्थिर, एकदम स्थिर।

बात को समझना ही है यह तो। खुद केवलज्ञान स्वरूप ही है। केवलज्ञान लेने नहीं जाना है, खुद का स्वरूप ही है। केवलज्ञान यानी क्या? सिर्फ ज्ञानस्वरूप।

ज्ञाता-द्रष्टा को 'फॉरेन' का जोखिम नहीं

यह हमारे ज्ञान देने के बाद होम और फॉरेन (स्व-पर) दोनों अलग हो गए, उसके बाद हम कहते हैं कि यदि आप अपना ज्ञाता-द्रष्टापन नहीं चूकोगे तो आप 'फॉरेन' के लिए बिल्कुल भी जोखिमदार नहीं हो।

प्रश्नकर्ता : ज्ञाता-द्रष्टा का *लक्ष* ठीक से नहीं बैठता। वह आता है और चला जाता है।

दादाश्री : वह तो चला जाएगा। लेकिन

जब वह निरंतर रहने लगेगा न, तब आप भगवान हो चुके होंगे। अत: यह चला जाता है, फिर भी वह पूर्ण तो ज़रूर होगा। क्योंकि अभी तो संसार में सभी कार्य बाकी हैं न! संसार की सभी फाइलें बाकी हैं या नहीं?

प्रश्नकर्ता : बाकी हैं अभी।

दादाश्री : वे फाइलें जैसे-जैसे कम होती जाएँगी, वैसे-वैसे यह *लक्ष* अधिक से अधिक दृढ़ होता जाएगा। फाइलों के कारण रुका हुआ है सारा।

प्रश्नकर्ता : खुद में अविरत रूप से रहा जा सके, ऐसी कृपा कीजिए। *पुद्गल* के हर एक संयोग को पर-परिणाम जानने में कमी रह जाती है।

दादाश्री : आपकी जो पहले की फाइलें हैं न, उन फाइलों का *निकाल* (निपटारा) कर देना। कोई कमी रह जाए, वहाँ पर समझ जाना कि यह फाइलों के कारण ही है। यानी अविरत रूप से ज्ञाता-द्रष्टा पद में नहीं रह पाते हैं। उसका कारण यही है, ये सारी एक तरह की पिछले हिसाब की दखल हैं फाइलों की। इसलिए अविरत रूप से नहीं रह पाता।

अक्रम अर्थात् यह कारण मोक्ष ही हो गया कहलाएगा। लेकिन ये जितने कर्म बाकी बचे हैं, उनका ज्ञाता-द्रष्टा पूर्वक निबेड़ा लाना है। ज्ञाता-द्रष्टा की तरह यह सब 'देखने' से निबेड़ा आएगा तो आत्यंतिक मोक्ष हो जाएगा। बस, और कुछ नहीं है। फिर चाहे कैसे भी कर्म हों, चाहे कितने ही गाढ़ हों, खराब हों लेकिन यदि ज्ञाता-द्रष्टा रहे तो छूट जाओगे।

परक्षेत्र में न जाए, वह 'अदीठ तप'

आप ज्ञाता-द्रष्टा अर्थात् चंदूभाई का कैसा चल रहा है, वह आपको देखते रहना है। और चंदूभाई का मन क्या कर रहा है, वह देखते रहना है क्योंकि मन आपके ताबे में नहीं रहा, बुद्धि आपके ताबे में नहीं रही, चित्त आपके ताबे में नहीं रहा। सबकुछ इस तरफ आ गया है और आप अलग रह गए। अत: आपको आपके क्षेत्र में ही रहना है। अब क्षेत्र से बाहर नहीं निकल सकते। परक्षेत्र में थे, तो अब स्वक्षेत्र में आ गए। अत: परक्षेत्र में दखल नहीं होना चाहिए। यानी चंदूभाई के मन-बुद्धि-चित्त ये सब क्या कर रहे हैं, उन्हें देखते रहना है। खराब कर रहा हो, गलत कर रहा हो वह नहीं देखना है आपको, लेकिन यही देखते रहना है कि वह क्या कर रहा है। अच्छा-बुरा होता ही नहीं है भगवान के वहाँ। अच्छा-बुरा समाज के अधीन है।

आपको आत्मस्वरूप होने की ज़रूरत है, बाकी कुछ भी नहीं है। यह शरीर कट जाए या चाहे कुछ भी हो जाए, आपको देहस्वरूप नहीं होना है। परक्षेत्र में जाओगे तो संसार कड़वा ज़हर जैसा लगेगा।

पूरा जगत् परक्षेत्र को स्वक्षेत्र मान बैठा है। यही मैं हूँ और यही मेरा क्षेत्र है! हम आपको ज्ञान देते हैं तब परक्षेत्र समझने लगते हैं कि परक्षेत्र में जो मैं-पन था, वह स्वक्षेत्र में रहना चाहिए। लेकिन फिर आपको वह एकदम से रह नहीं पाता न? उन सबका *निकाल* करना है न? निबेड़ा लाना है न सबका? मेरे काफी कुछ निबेड़े आ चुके थे। (मेरा इस) शरीर के अंदर स्वक्षेत्र में ही मुकाम है। फिर ड्रामा भी चलता है दिन भर और अंदर खुद के क्षेत्र में ही मुकाम है।

स्व और पर के बीच संपूर्ण जाग्रत रहकर पर में नहीं जाना, वही अदीठ तप है। यह मार्ग तो स्व-पर वाला मार्ग है। बाहर (अन्य जगह) तो स्व और पर का भान ही नहीं है न!

पुरुष पद में शुरुआत पुरुषार्थ-पराक्रम की

बाकी अब यदि कोई भी उलझन हो तो समझ जाना कि आपने स्वक्षेत्र से बाहर परक्षेत्र में हाथ डाला है। तो तुरंत ही कह देना कि, यह 'मेरा स्वरूप नहीं है', ऐसा कहते ही छूट जाएगा।

प्रश्नकर्ता : यह मेरा नहीं है, कहते ही छूट जाएगा।

दादाश्री : हाँ, मेरा नहीं है। मेरे स्वरूप में यह नहीं है और जो है वह मेरा स्वरूप नहीं है। बनना और बिगड़ना मेरे स्वरूप में हैं ही नहीं, निरंतर परमानंदी है। जहाँ संसार का ज़रा सा भी, किंचित्मात्र दु:ख का अभाव बरतता है, अर्थात् आपके पुरुष होने बाद का पुरुषार्थ ऐसा होना चाहिए।

आपका 'मैं' पहले परक्षेत्र में और परसत्ता में था, अब वह 'मैं' स्वक्षेत्र में और स्वसत्ता में बैठ गया है। इसलिए पुरुषार्थ और पराक्रम की शुरुआत होगी।

स्वक्षेत्र में ज्ञाता-द्रष्टा, वह है यथार्थ पुरुषार्थ

'खुद' के प्रदेश में 'देखना-जाननापन' ही है। अन्य कुछ भी नहीं है। परमात्मपन है! 'देखने-जानने' से आगे जाने के कारण परेशानी है!

'एक्ज़ेक्टनेस' (यथार्थता) में आना है। उसमें 'रियल' भी सही है और 'रिलेटिव' भी सही है। 'रिलेटिव' ज्ञेय स्वरूप है और 'रियल' ज्ञाता स्वरूप है। 'ज्ञेय-ज्ञाता' संबंध हो गया, वही 'एक्ज़ेक्टनेस' है। 'एक्ज़ेक्टनेस' में जीते जी ही मोक्ष का अनुभव होता है।

सामने वाला चाहे माला पहनाए या गालियाँ दें, फिर भी 'एक्ज़ेक्टनेस' (यथार्थता) में दोनों ज्ञेय हैं, इसलिए उसे कुछ भी (असर) नहीं होता।

अब यह पूरा जगत् 'ज्ञेय' स्वरूप है और आप 'ज्ञाता' हो। आपको 'ज्ञायक' स्वभाव उत्पन्न हुआ है, फिर अब बाकी क्या रहा? 'ज्ञायक' स्वभाव उत्पन्न होने के बाद 'ज्ञेय' को देखते ही रहना है!

आत्मा ज्ञाता-द्रष्टा हो गया इसलिए सहजात्मा हो गया। किसी में दखल नहीं करता। ज्ञाता-द्रष्टा का पुरुषार्थ तो, उसकी बात ही अलग है न!

ज्ञाता-द्रष्टापन वहाँ आत्मा अलग

ज्ञाता-द्रष्टा का अर्थ क्या है? इसका सब से उच्च प्रकार का अर्थ यह है कि, खुद अंदरूनी तौर पर क्या कर रहा है? मन-बुद्धि-चित्त-अहंकार सभी क्या कर रहे हैं, इन सभी को हर तरह से जाने और देखे, बस। इसके अलावा और कुछ नहीं। और आपको किस पद तक पहुँचना है कि चंदूभाई चलते-फिरते दिखाई दें। चंदूभाई घूम रहे हों न और उसे आप (शुद्धात्मा में) बैठकर देखो तो उस समय वे चंदूभाई दिखाई देने चाहिए। कैसे घूम रहे थे ऐसा आपको चंदूभाई का पूरा शरीर दिखाई देना चाहिए। बाहरी भाग दिखाई देना चाहिए, अंदरूनी देखने में देर लगेगी। जब बाहरी हिस्सा अलग दिखाई देगा तब वीतराग होने लगोगे, फिर संपूर्ण वीतराग हो सकोगे।

अब बाहरी भाग क्या है? कि बेटा यों जा रहा हो और उसकी जेब से पैसे गिरने लगें तो पहले आप क्या करते थे? कलह करते थे, उछल-कूद मचा देते थे। 'अरे! रुक जा, पैसे गिर रहे हैं, रुक जा।' अंदर सब हिल जाता था। क्योंकि (अहंकार) जीवित था, चंदूभाई के तौर पर जीवित था। इसलिए ऐसा होता था न! लेकिन जब तक चंदूभाई के तौर पर जीवित था तब तक। 'ज्ञान' मिलने के बाद शुद्धात्मा हो गए यानी यह ज्ञाता-

द्रष्टा हो गए तो फिर यदि पैसे गिरने लगें या जो कुछ भी होना हो, तब आप चेतावनी दे सकते हो कि, 'भाई, तेरी जेब से पैसे गिर रहे हैं'। *खेंच* (आग्रह) नहीं करनी है। जो हुआ वह डिस्चार्ज है और *खेंच* नहीं करनी है, ऐसी जागृति रहे, वही पुरुषार्थ है।

बाकी कहना तो चाहिए, मैं भी आपसे कहता हूँ कि 'मोटेल इस तरह चलाना है।' परंतु हमें *खेंच* नहीं होती, राग-द्वेष नहीं होते। खेंच होती ही नहीं है न! 'हमारा सही है', ऐसा हम मानते ही नहीं है। जो सही है वह सही है, हमारा सही नहीं है, जो हुआ वह करेक्ट! फिर उसमें हम डिस्टर्ब नहीं होंगे बिल्कुल भी। यदि चेतावनी नहीं देंगे, तब भी हर्ज नहीं है। मानों जीवित हैं, ऐसा पता नहीं चलना चाहिए।

धीरे-धीरे दृष्टि बढ़ती जाएगी। अभी यदि जीवित होता तो कलह करके रख देता। अब तो जो भूल होनी हो या नुकसान होना हो तो भले हो, आपको ज्ञाता-द्रष्टा रहना है। मरने के बाद फिर क्या कर सकते हैं? बाद में भूलें हों तो? यह सब इस तरह से, देखना है! बेटी के हाथ से सारे ग्लास वेयर टूट जाएँ तो आप सिर्फ देखने वाले और जानने वाले। बस! एक अक्षर भी मत बोलना, जैसे जीवित ही न हों उस तरह से रहना।

प्रश्नकर्ता : दादा, आपने तो बहुत ही अल्प समय में कृपालुदेव जैसी अंतिम दशा दे दी!

दादाश्री : हाँ, तो कल्याण हो जाएगा न, वह अच्छा है। अंतिम ज्ञाता-द्रष्टा तो, जब चंदूभाई आ-जा रहे हों तो आपको यों दिखाई देना चाहिए कि ओहोहो, आइए चंदूभाई, ऐसी सब बातें कर रहे हों तब भी आपको अलग दिखाई देने चाहिए। चंदूभाई दादाजी के पैरों पर तेल मालिश कर रहे हों, तब भी आपको अलग दिखाई देने चाहिए और यदि आप कहो कि, 'चंदूभाई ने बहुत बढ़िया मालिश की' तो वह अंतिम (बात) है!

प्रश्नकर्ता : यों आकृति से अलग दिखाई देगा या समझ से अलग दिखाई देगा?

दादाश्री : पहले समझ से अलग दिखाई देगा, फिर धीरे-धीरे आकृति से दिखाई देगा। चलते-फिरते जैसे अन्य कोई जा रहा हो, वैसा दिखाई देगा। ये भाई आते-जाते हुए दिखाई दे रहे हैं तो क्या वह समझ से दिखाई दे रहा है?

प्रश्नकर्ता : नहीं, आकृति से।

दादाश्री : ऐसा दिखाई दे वह ज्ञाता-द्रष्टापन है, अर्थात् आत्मा अलग है। उसके लिए ज़्यादा लालच मत करना। वह तो बहुत बड़ा पद है। आपको तो यह जितना दिया है, उतना दृढ़ हो जाए तो बहुत हो गया। लिमिट बाँधने जाएँगे तो यह भी रह जाएगा और वह भी रह जाएगा।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा न कि इतना जुदापन होना चाहिए कि चंदूभाई अलग दिखाई दें, चलते-फिरते हुए, लेकिन उसमें द्रष्टा तो चंदूभाई के अंदर ही है न?

दादाश्री : तभी देखना है न! चंदूभाई के अंदर है फिर भी 'उसे' अलग दिखाई देता है। लेकिन वह तो अंतिम पद है। आपको तो, मैंने जितना बताया है, यदि उतना ही आ जाए तो बहुत हो गया। यदि उस स्टेशन तक पहुँच गए तो बाकी के सभी स्टेशन आ जाएँगे।

स्वभान होने पर रहता है परमानंद

ज्ञाता-द्रष्टा का फल आनंद है। एक ओर ज्ञाता-द्रष्टा रहना और दूसरी ओर आनंद उत्पन्न

होना, ऐसा है। जैसे सिनेमा में गया हुआ व्यक्ति सिनेमा का परदा नहीं उठे, तब तक बेचैन रहता है, सीटियाँ बजाता है। ऐसा वह किसलिए करता है? क्योंकि उसे दुःख होता है कि जो देखने आया है, वह उसे देखने को नहीं मिल रहा है। ज्ञेय को नहीं देखे, तब तक उसे सुख उत्पन्न नहीं होता। उसी प्रकार आत्मा ज्ञेय को देखे और जाने तब भीतर परमानंद उत्पन्न होता है।

प्रश्नकर्ता : परमानंद में कौन रहता है? मैं रहता हूँ या परमात्मा रहते हैं?

दादाश्री : नहीं, आप 'खुद' ही, 'मैं' ही। 'मैं चंदूभाई नहीं', 'मैं चंदूभाई', वह रिलेटिव व्यू पॉइन्ट से है। 'मैं शुद्ध चेतन हूँ', ऐसा भान हो जाना चाहिए आपको। अस्तित्व का भान हो जाना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : चेतन को परमानंद में रहने की ज़रूरत है क्या?

दादाश्री : नहीं, खुद ही परमानंद स्वभाव वाला है, स्वाभाविक रूप से परमानंद है। उसे रहने की कोई ज़रूरत नहीं है। खुद स्वाभाविक है। यह तो आप 'मैं चंदूभाई' हो जाते हो इसलिए आप परमानंद ढूँढते हो क्योंकि आपको परमानंद नहीं है।

ज्ञाता-द्रष्टा पद में परमानंद

प्रश्नकर्ता : कौन सी स्थिति को हम परमानंद कहते हैं? उसका कोई वर्णन तो होगा न?

दादाश्री : ये सूर्यनारायण हैं लेकिन दिखाई नहीं देते, फिर भी नीचे प्रकाश दिखाई देता है। बादल हल्के हैं इसलिए प्रकाश छाया के रूप में दिखाई देता है। अभी आपको ऐसा सुख मिला है और जब बादल नहीं रहेंगे और स्वभाव में ही आ जाएँगे तो परमानंद है।

प्रश्नकर्ता : उस परमानंद की तरफ जाएँ कैसे?

दादाश्री : बुद्धि का उपयोग नहीं हो और ज्ञाता-द्रष्टा रहे तो परमानंद रहता ही है। और उस परमानंद का अनुभव ही आत्म अनुभव है। दखलंदाज़ी नहीं करे तो वह ज्ञाता-द्रष्टा रहेगा और उसी का फल परमानंद है। शुद्धात्मा का स्वभाव ज्ञायक स्वभाव है। उस स्वभाव का फल क्या है? परमानंद! चाय में चीनी को पीसकर नहीं डालना पड़ता। क्योंकि उसका स्वभाव ही है पानी में घुलने का है। उसी प्रकार आत्मा का स्वभाव है, ज्ञाता-द्रष्टा और परमानंदी। आत्मा खुद के गुणधर्मों में ही रहता है!

'हम' तो मूलतः दखल रहित व्यक्ति हैं। हम दखल रहित हो गए तो फिर सब दखल वाले लोग बैठे हों तब भी हम पर क्या असर होगा? 'हमारी' उपस्थिति से ही सारा दखल खत्म हो जाता है। 'जिनका' मुकाम 'आत्मा' में ही है, 'उन्हें' क्या झंझट? जिनका मुकाम ही 'आत्मा' में है, 'उन्हें' व्यवहार बाधक नहीं है।

शरीर समझदार हो जाए, उसे कहते हैं, 'व्यवहार चारित्र'। आत्मा समझदार हो जाए, उसे कहते हैं 'निश्चय चारित्र'। आत्मा समझदार हो जाए, उसे कहते हैं ज्ञाता-द्रष्टा। वह परमानंद में ही रहता है। किसी और झंझट में हाथ नहीं डालता। आत्मा का चारित्र अर्थात् ज्ञाता-द्रष्टा और परमानंद में रहना।

गुप्त चमत्कार यानी क्या कहना चाहते हैं कि यह परमानंद खुद के पास ही है। इसे ढूँढने के लिए देखो यह धाँधली मचाई है, लेकिन वह मिलता नहीं है। यह गुप्त चमत्कार है। यदि वह मिल जाए तो काम हो जाएगा।

जय सच्चिदानंद

कुचारित्र का जानना, वही है चारित्र

प्रश्नकर्ता : यह सब चारित्र में आना चाहिए न?

दादाश्री : चारित्र में लाने की ज़रूरत नहीं है। कुचारित्र को जाना, उसी को चारित्र कहते हैं। अच्छे चारित्र की मस्ती चढ़े, वह है कुचारित्र। वह भयंकर जोखिमदारी है।

प्रश्नकर्ता : तो हमें क्षायक समकित का अहंकार हो जाए...

दादाश्री : ज्ञान दिया है इसलिए अहंकार तो नहीं होगा लेकिन मस्ती चढ़ती है, वह भी गलत है फिर!

प्रश्नकर्ता : तब फिर आप तो आनंद के लिए किसी प्रकार की जगह ही नहीं रहने देते।

दादाश्री : अरे! आनंद तो, खुद के स्वरूप में से आनंद लो न! आभासी आनंद क्या लेना? मस्ती रहनी चाहिए क्या? मस्ती तो, ये जो बाहर के लोग लौकिक धर्म को धर्म मानते हैं, वे लोग मन की मस्ती में, देह की मस्ती में, वाणी की मस्ती में हैं। पूरा जगत् मस्ती में डूबा हुआ है। बावा-बावी, साधु-सन्यासी सभी मस्ती में ही पड़े हैं। वह मस्ती भी पूरे दिन नहीं टिकती। थोड़ी देर ही, बाद में वापस जैसा था वैसा ही। बाद में फिर से मस्ती चढ़ती है! जबकि यहाँ पर मस्ती नहीं आनी चाहिए।

प्रश्नकर्ता : लेकिन हम तो अन्य सारी मस्ती छोड़कर अब दादा की मस्ती में रहते हैं।

दादाश्री : उसे मस्ती नहीं कहते। बाकी, सुचारित्र की मस्ती रहे तो वह बल्कि नुकसान पहुँचाती है। उसकी बजाय कुचारित्र का 'जानपना' फायदेमंद है। कुचारित्र को 'जाने', वही आत्मचारित्र है।

प्रश्नकर्ता : हमने कुचारित्र को 'जाना' तो सही, लेकिन क्या पॉज़िटिव चारित्र के किसी भी प्रकार के आनंद के बगैर जीना है?

दादाश्री : जब 'जानता है' उस समय आनंद रहता ही है, और जब 'करता है' उस समय दु:ख रहता है।

प्रश्नकर्ता : अब, अपने कुचारित्र को 'जाना' उस समय आनंद किस बात का रहना चाहिए? तब तो दु:ख-वैराग्य होगा कि इस कुचारित्र को 'जाना'।

दादाश्री : कुचारित्र का स्वभाव ही ऐसा है कि खुद का वह जानपना खो जाता है। यदि इतनी अधिक जागृति आ जाए और कुचारित्र के समय भी ज्ञान हाज़िर रहे, 'जानपना', तो वह सब से उच्च प्रकार का चारित्र है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन जब टेढ़ा हुआ दिखाई दे तब दु:ख तो होगा न?

दादाश्री : वह टेढ़ा नहीं है। भगवान के यहाँ टेढ़ा नहीं होता, समाज में टेढ़ा है। समाज क्या कहता है? यह टेढ़ा और यह सीधा, यह नालायक और यह लायक, ऐसे सभी द्वंद्वों वाला है समाज। भगवान के यहाँ एक ही चीज़ है। सभी ज्ञेय ही हैं।

(परम पूज्य दादाश्री की ज्ञानवाणी में से संकलित)

पूज्य नीरूमाँ / पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत

- **'साधना'** पर हर रोज़ सुबह 7-50 से 8-15 (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन उत्तरप्रदेश'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-30 और दोपहर 3 से 4 (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन सह्याद्रि'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-45 (मराठी में)
- **'दूरदर्शन सह्याद्रि'** पर हर रोज़ दोपहर 3-30 से 4 सोम से शुक्र और शनि-रवि दोपहर 11-30 से 12
- **'आस्था कन्नड़ा'** पर हर रोज़ दोपहर 12 से 12-30 तथा शाम 4-30 से 5 (कन्नड़ा में)
- **'दूरदर्शन चंदना'** पर हर रोज़ शाम 6-30 से 7 (कन्नड़ा में)
- **'धर्म संदेश'** पर हर रोज़ सुबह 2-50 से 3-50, दोपहर 2-30 से 3 तथा रात 8 से 9 (गुजराती में)
- **'दूरदर्शन गिरनार'** पर रोज़ सुबह 7-30 से 8-30, रात 9-30 से 10-30 (गुजराती में)
- **'वालम'** पर हर रोज़ शाम 6 से 7 (सिर्फ गुजरात राज्य में) (गुजराती में)

USA - Canada

- **'TV Asia'** पर रोज, सुबह 7-30 से 8 EST

UK

- **'MA TV'** पर रोज़ शाम 5-30 से 6-30 GMT

Australia

- **'Rishtey'** पर हर रोज़ सुबह 8 से 8-30 तथा दोपहर 1-30 से 2 (हिन्दी में)

Fiji - NZ - Singapore - SA - UAE

- **'Rishtey'** पर हर रोज़ सुबह 6 से 6-30 तथा 7-30 से 8 (हिन्दी में)

USA - UK - Africa - Australia

- **'आस्था ग्लोबल'** पर सोम से शुक्र रात 10 से 10-30 (डीश टीवी चेनल 849-युके, 719-युएसए)

'दादावाणी' के सदस्यों के लिए सूचना

हिन्दी भाषा में दादावाणी पत्रिका हर महिने 15वी तारीख को पोस्ट की जाती है। जिन महात्माओं को 'दादावाणी' पत्रिका विलंब से या तो अनियमित रूप से मिलती है, वे पूर्व प्राप्त पत्रिका के कवर पर अपना नाम, पता, पीनकोड आदि जाँच कर लें। यदि उसमें कोई भूल हो तो आपका ग्राहक नं, पूरा नाम-पता, पीनकोड के साथ लिखकर मोबाईल नं. 8155007500 पर SMS करें। आप अडालज त्रिमंदिर के पते पर पत्र से या dadavani@dadabhagwan.org पर इ-मेइल से भी सूचित कर सकते हैं। जिससे आपकी यहाँ दर्ज की गई जानकारी में सुधार किया जा सके। यदि आपको दादावाणी का अंक न मिले तो उपर दिए गए कोई भी माध्यम से हमें सूचित करें। यदि अंक स्टोक में होगा तो आपको फिर से भेजा जाएगा।

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सानिध्य में आगामी सत्संग कार्यक्रम

अडालज

26 अप्रैल (शनि) शाम 5-30 से 7-30 - **सत्संग**

27 अप्रैल (रवि) शाम 4-30 से 8 - **ज्ञानविधि**

7 से 11 मई (बुध से रवि) **(PMHT पेरेन्ट्स महात्मा) - सत्संग शिविर**

9 मई - पूज्यश्री के जन्मदिन के अवसर पर विशेष कार्यक्रम

सूचना : 1) यह शिविर ज्ञान लिए हुए विवाहित महात्माओं के लिए ही रखी गई है। 2) शिविर में, **पति-पत्नी का दिव्य व्यवहार**, **माता-पिता बच्चों का व्यवहार**, **पैसों का व्यवहार**, यह टोपीक पर पूज्यश्री दीपकभाई द्वारा गुजराती में सत्संग होगा तथा आप्तपुत्र भाईयों तथा आप्तपुत्री बहनों द्वारा ग्रुप सत्संग किए जाएँगे। हिन्दी भाषी महात्माओं के लिए रेडियो सेट के द्वारा हिन्दी में भाषांतर की सुविधा उपलब्ध होगी। भाग लेनेवाले महात्मा अपने साथ खुद का FM रेडियो और हेडफोन लेकर आए। अगर आपके मोबाइल में FMकी सुविधा है, तो सत्संग स्थल पर आपके मोबाइल पर ही सत्संग का हिन्दी भाषांतर सुन सकेंगे। 3) शिविर में भाग लेने के लिए रजिस्ट्रेशन करवाना आवश्यक है। शिविर रजिस्ट्रेशन संबंधित जानकारी **Akonnect** ऐप के द्वारा दी जाएगी।

मुंबई

2-3 मई (शुक्र-शनि) शाम 6 से 9 - **सत्संग**

4 मई (रवि) शाम 5-30 से 9 - **ज्ञानविधि**

स्थल : जी. एच स्कूल, महात्मा गाँधी क्रोस रोड, बोरीवली (पूर्व), मुंबई. **संपर्क :** 9323528901

सुरत

16-17 मई (शुक्र-शनि) शाम 8 से 11 - **सत्संग**

18 मई (रवि) शाम 7-30 से 11 - **ज्ञानविधि**

स्थल : उन्नति फार्म, **BRTS** रोड, सीमाडा गाम, नाना वराछा, सुरत. **संपर्क :** 9574008007

नवसारी

20 (मंगण) और **22** (गुरु) **मई** शाम 7 से 10 - आप्तपुत्र **सत्संग**

21 मई (बुध) शाम 6-30 से 10 - **ज्ञानविधि**

स्थल : श्री रामजी मंदिर, रोटरी आई होस्पिटल के पास, दुधिया तालाब, नवसारी. **संपर्क :** 9081799231

हरिद्वार में नेशनल हिन्दी शिविर - वर्ष 2025

28 मई से 1 जून - सत्संग और **29 मई** (गुरु) शाम 4 से 7-30 - **ज्ञानविधि**

सूचना : यह शिविर गुजराती भाषा नहीं जानने वाले मुमुक्षु-महात्माओं के लिए साल में एक बार हिन्दी में विशेष रूप से आयोजित की जाती है। शिविर रजिस्ट्रेशन संबंधित जानकारी **Akonnect** ऐप के द्वारा दी जाएगी।

स्थल : पतंजलि वैलनेस सेन्टर, पतंजलि योगपीठ - 2, **पंचायांपुर**, **हरिद्वार** - 249405. **संपर्क :** 9924348880

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : 9328661166-77, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **मुंबई :** 9323528901, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** 9924341188, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा :** 9574001557, **गोधरा :** 9723707738, **जामनगर :** 9924343687, **भावनगर :** 9313882288, **अहमदाबाद (दादा दर्शन) :** 9574001445, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्ली :** 9810098564, **बैंगलूर :** 9590979099, **कोलकता :** 9830080820
यु.एस.ए.-केनेडा: +1 877-505-3232, **यु.के.:** +44 330-111-3232, **ऑस्ट्रेलिया:** +61 402179706

रामदेवरा

जैसलमेर

केसरियाजी

श्रीनाथजी

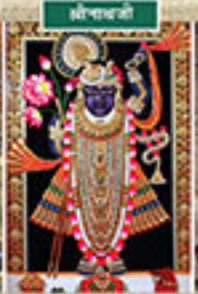

राणकपुर

नाकोड़ाजी

रामदेवरा

दादावाणी

प्रकृति स्वभाव को जाने, वह ज्ञायक

प्रकृति स्वभाव को निहारे, उसे ज्ञायकता कहते हैं। वह भी दूसरों की नहीं, खुद की ही। जबकि प्रकृति स्वभाव का वेदन करे, उसे वेदकता कहते हैं और प्रकृति स्वभाव को जाने उसे ज्ञायकता कहते हैं। अनादि से परिचय है न, इसलिए सिर में दर्द हुआ वह तो वास्तव में तो खुद जानता ही है और कुछ भी नहीं करता और आपको ज्ञायकता दी हुई है कि प्रकृति को देखो। तो प्रकृति के सिर में दर्द हुआ उसे देखना है, इसके बजाय, मुझे दर्द हो रहा है ऐसा करने से वहाँ अजागृति आ जाती है। इसलिए वह दर्द शुरू हो जाता है। और यदि जाने, तो किसे दर्द हो रहा है उसे जानता है। सामने वाले के दु:ख को भी जानता है।

-दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner.
Printed at Amba Multiprint, Opp. H B Kapadiya New High School, Chhatral - Pratappura Road,
At - Chhatral, Tal : Kalol, Dist. Gandhinagar – 382729.